মূলাঃ— অগ্রিম বাধিক ৮॥, ডাক মাশুল ১॥০, হাগাসিক ৪৬, ডাকমাশুল ৬০, ত্রেমাসিক ৩, ডাক মাশুল । এ০ আনা। অন্ত্রিম বাধিক ১০॥০, ডাক মাশুল ১॥০টাকা প্রতি খণ্ড। প্রিজ্ঞাপন প্রকাশের মূল্যঃ—প্রতি প ক্রি, প্রথম, দ্বিতীয় ও তৃতীয় বার ১০, চতুর্থ ও ততোধিকবার প্রত্যানা। ইংরেজী প্রতি পংক্তি। তথানা।

৯ম ভাগ

41

किलको छा:- ७०८ल देवलांथ, -शुङ्ग्ले छिवांत्र, मन ১२५० माल हे ১३ई (म

३५१७ माल।

विड्वांशन। --:01c:--

श्राम्क्यां न गां हिना। मः क्षे रिख, क्षिनिः लाई खित, हिना-वोजांत २२,१० ७ ७) नर तमभग्न स्ट्रत (निकारन ७ न २ (जानानाथ गूर्थाशाधार । गुला। ।) जाना माज जाक माजन । जाना

নিম নিখিত পরীক্ষিত ঔষধ কলিকাতা २४ नः योगानुक्त जी युक वातृ मानी जून। एत বাটিতে ও ভদ্রেশ্বরে উক্ত বাবুর ডিস্পেসারিতেতে थां ख्वा।

১। ज्ञिन्ति हे कागि कत । এই महौर्य अं जिनात उ देलां देश व्याधित विदल्य देशकाती ध्वः इश वांत्रा অনেক আরোগ্য লাভ করিয়াছে। মূল্য॥०० श्राकि १/३०

२। जीश्रकालीन शानिश प्रवा। श्रिअंशि वाङ्गिन এक চামচে পান করিলে শরীর সিশ্ধ, হজ-गीकांतक, जाशि वृष्णिकांतक उ পেটের উপদ্রব নাশ कतिद्व। मूला॥०० भगिकिः ०

७। वृश्द शिय मार्गत जिला। अहे छेदक्के दिल्ला গাতে ব্যবহারে বায়ু পিত রোগ সকল বিশেষ উপ-क्षिणलां क्रित्र । यथाः—गांथा (यात्रां, त्वमना, भितः भी डा, भां ब जाला, भंगीत ज्यमञ्चा, श्वक्भां, हाक शांत पर्भा, याखिएकत की पंजा डेमाताथान, वांत डेकान्ति हेनािक मूला ५ शाकिः ल

8। वाजताज जिल इशांज विविध वांज यथा कांगडात्ल, विद्रत्ल, कर्गकर्ण, शंक था व्यवमं, वा हित्य धता यङ जित्नत इडेक ना किन निन्ध्य है जा-(ताथा इहेर्व ग्ला ५० शांकिश ले

७। कर्च (त्रांभाषि (जल। भंतल, पाप कूलकिन, तक कुछ, পাছ।, টাক, পারা ছারা বা শোণিত বি-कृ इ इशा प्रक्रित छे थेत एक कि त म, ना ५० था कि ९०/

७। कर्ग भी ए। रेज्म। इंशरंज कर्णत कर्णत विविध भीषा, कार्पत जिल्लत घा, अ तम वा भूज श्वन, वां विधित्रका मिष कार्तिगा इरेद मूला॥०

व। नतीत भाषक व हैका। यह श्रांकृष्ट भीड़ा, বহুম জ, শ্বেত প্রদর, জ্রী লোকের বাধক পুরতন কালী णम थिंड, एला, जर्भ, प्रस्ला अ श्रुक्ष शिंब शिंब विक একটি রোগের ভিন্ন ২ অনুপান দিয়া সেবন করিলে जुताश जारताभा इहेरव मूला ३४ भारिकः /

। गृहिगी अ अङ आधार्णाय विका। इंशांड নুত্ন বা পুরাতন আমাশয়, পেটের বেদনা, কাম-द्धान, उ गृहिंगी शीषांत देशनाम इहेरव । मूला ५ दो

त्रा छेशमः भा त्रांग उ यात जा जि छे छ म मलम्॥ পারাসংশ্লিষ্ট রহিত) নানা বিধ গরামর অন্যান্য शा यथ। बूजन, शूर्तांजन घा, नाली घा वर्ण शीषात य चा विलिया थांदक, भावांत चा, विल्लंब डः कुडन चा अश्वीद्व म्दा काद्योगा इहेद्य। मूला॥० के/५० जन रि. एन बर्खीए, जन रिम्ब, जन, जम, जम,

:51

THE INDIAN EVIDENCE

ACT 1872.

KISHORI LAL SARKAR M. A. B. L.

Price Rs. 3

This is decidedly the best edition of the Indian Evidence Act that we have yet seen Babu Kissoree Lal Sircar has spared no pains to emove the difficulties which stand the unintiated ceaders of the Act in the face. He has made the work acceptable to the public generally. Law Observer.

To be had at the Amrita Bazar Putrika Office and Thacker Spink & Co's Library.

জেলা রাজদাহী নাটোরের সন্মিগ্য আতাইকুলা निवामी आभाव आजीश बीबीनाथ रेमरवंश ३१ वरमव वाबूरमान इहेशार्ड्न। वाशामी रिक्ष मार्म वाशास छेक्त रेन दिक निर्कारद छेपा शि इहेट छ । जङ्ज य अहे विष्ठां भन मिटिक यि, यमि कि निस्न वार्य विशिष् উक्त रेभव्य महाभारयत जीविक मश्वाम छ ठिकाना ५० रिजा-छित्र शृद्धि जागारक मिए शार्त्रन अ रम हे किकाना गड विश्वेख मिक भिया छेक वाकिएक প्रार्थ इन उरव जामि मश्वाममाञादक ১৫० छोका शाजिद्यां विक मिव। छेङ वाक्तित প্রদিদ্ধ কোন তির্থ স্থানে, দেবালয় কি আখড়া-দিতে থাকাই সন্তব। যদি মৈতেয় মহাশয় স্বহস্ত लिখिङ পত্র দার। ভাঁহার জীবিত সংবাদ আমাকে দেন তবে । उर्क दिन इकामि निया ।

वशम (१) (१) वरमत्र, ञावशव ञार्थकाङ्ग अर्थ, छेख्य माग्यवर्ग, कथारल इ छेथा में किन किन किन यो पांचान किन मार्ग।

१३ रेवलांथ ने जी वल्ल वी कांख छ छो हार्च রাম নারায়ণ পুর थाना मथ् ता, ज्दब्धा (भाक्षांकिम उर्भेश का लिया (जिन्ना ।

लीन जी युक यश्ता जा विता ज वर्षयान প্রদেশাধিগতি বাহাত্রের

ञानु । विञ अ जानु छ। ज

जोश (वंवरण कि वेषशालश

38७ नः लाशांत हिर्शृत (तां ए किलाती বালাখানা, কলিকাভা।

खेशदर्शक खेमभानास **का**स्त्रका कार्याच या-क्रमा भट्डत मर्स्वश्रकात त्रांत्रात नानाविश क्रकृ जिम श्वेषश, टेंबल, शृंड उ थांठनानि स्लंड गूटला म-शशुक्त हिकिৎमक मर्सना ज्थां य जेशिष्ड थाकिया वावन्धा शूर्वक छेषभाषि छाषान करतन।

কোষ বৃদ্ধি (এক শীরা) পী ড়ার মহোষ্য। এই कछेकत शीए। यदि एक वर्मदतत अनिधक काल मर्या ममूख् इ इहेग्रा थारक छाहा इहेल निक्छ ग्रहे **बहे मरहोयध धक (कांछे। माज (मयन करित्न मल्ल**) र्ग

व्याद्यां श्रा ७३ थीं एवं वर्मद्वत व्यक्षिक काल्नित इहेल हेश किकिश व्याशिक काल स्मियतिह निः भाष जारियामा इया ७३ उथथ करयक पियम मिवान खुन, पिविना श्रेष्ट्रि डेशप्त मकल मृतीक्ष इत। धई वाशि कर्ज्क मर्बना य श्रूक्ष पद्भ श्रीन इहेशा थात्क जाशा डेश मियतन विभिन्ने क्रिश আরোগা হয়।

अक कि विशि मूला २ हे कि। जिक मा छल ञ्ज ञ्चन विका।

(मर्का প্রাকার জী রোগের মহেগ্রধ।)

चेश (मवन कतिल्ल तक उ (श्वड প্রদর, কর্ষরজ वाशक, त्रोभ वस्ता ध्वर ज्यकाल श्रमव ज्यभिर गर्ड व्यांव इंड्यांनि मर्ख श्रीकांत खीर्तांग निम्हत्रई व्यादिश्या व्या धई कल १०कत मिक्न विका मर्क শরীরের রক্ত পরিস্কার করিয়া জরায়র সমস্ত शीए। निःदभव आद्विश कदत्।

धक (की छोत सूला २ छोक।। छोक माल्जन १० टेड्यका तज्ञावनी।

ञ्चिमिक आंग्रुटर्सिनीय हिकि था। धान्ह हेशएक मगछ রোগের চিকিৎসা পথাপিখ্য उयभ প্রাংগ ও প্রস্তুত করিয়ার প্রণালী বিস্তারিত क्राल लिখिত আছে। ইহা পরিবদ্ধিত আর্থাৎ ইহাতে চক্ৰত, রসেন্দ্র চিন্তামণি ও শাঙ্গ ধর প্রভৃতি বিবিধ श्रेष्ट्र क्रिंड नानार्थकात रेडल, घड, श्रांड्र छेवश उ ञातिष्ठे ञागवापि मिलिष्ठि कतिया मूल उ वन ভাষায় অনুবাদ সহিত মুদ্রিত হইয়া ২ খণ্ডে প্রকাশিত रहेशारिह ; প্রতিখণ্ডের মূল্য ৩ টাকা ডাকমাশুল % व्याना। व्यावनाक इहेल व्यागात निकि गुना भाषा इलिइ थाश्व इइरवन।

जीविदनाम लाल रमन छश्च कवित्र छ क्याभाम।

(योवदन धार्मिनी। (अिंड्शिक मृन्धा कावा।)

खी(भागान मुत्थाभाषाम श्री । कलिकां जा, त्मां जा वां जांत्र, ৫० ने १ (श खीरिंडे ख मरक्ष बाला श्रुकान हा थाथवा, मूना ३ धक होका। एक माखन ८० जाना।

यৎमा ध्रित्रात मत्रक्षम।

जां मता विलां छ इहेट । जा छि छेखम छेखम मरमा धतियांत मत्रक्षम व्यर्था रिला जि हिथ, यू जा, क्रेल, शहे, वड़िम इंडािमि जिंडि ञ्चलंड मूला विक्सार्थ व्यागमानि कतियाछि। याँ शत প্রয়োজন ইইবে তিনি निम लिथिङ ठिकानां । उद्ध कतिल मिविट य व्यवशंड इहेटि शांतिदन।

ডि, এन, विश्वाम এवং কোঃ - ७२ न ९ (एल इंडिम अञ्चर्शांत पिकल বন্দুকের দোকান। কলিকাভা

विख्वां शन।

शिक्छी छत्रन यूर्थाशांशांश शंनीं नांवनावजी नांभक कि जुकावश डेशनगांम किलकां जा यांगांशुकूत (वर्षे हो देशित लिन मः ऋ ७ यद्धित श्रुकालाय) এक होका मुल्ला श्रांभा।

लान्दिर्शित निज धवर (कार হোমিওপ্যাথিক চিকিৎসক। 3 नर व्यान मात्रकूलात (तांष, कलिकांषा। (भियानम् (बन्छ या धारिमानि विक मधा (थ) जला छेठात वाका ३२ लिलि शूर्न मदमञ

পুস্তক ३८ किनिन, मदमङ श खक -- ५० রবিনির ক্যাম্থন

ध्यादन जाना मकल ध्यकांत्र (इंसि-छिशारिथक छेषध जून छ बूटना शांध्या यांस ध्वर मकल शंकांत शोषांत्र वारक्ष (मध्या यांश।

> श्रक्त वन्न नाहेक। वियुक्त उट्डिक् क्यांत्र द्रांश थनी 51

बुला ५ धक होक! छाक गांखन ७० जिन जाना।

कलिकां जा १४ नर कल्लिं छि, हे (करिनर नाई (बतीटक, ८न१ (खे. अ (तांटफ, ७ भागम वाकांत्र कत (श्राटम श्रांश्वा)।

वङ्गविद्धाना । अधिकामिक छेशनग्राम।

बीतरमम्हल मख थागीज। किलकांजा २८% न १ बक्वाकात की हे छोनद्रांश यद्य, एए नः करनक की हे कार्गनिश लाहे द्वितिष्ठ भाष्या माय। मूला ३।० ডাক মাশুল ১০ অনা।

शकि छाडियान, ३७००० नकार्थ शाउरा यारा मला॥०माणल /०। कलिकां जा छछ ८ थम। व ए व ए व्यविशान व्यव्यक्ता उँ क्रिके ।

लर्ज लिंग्रेत्नतं क्वि।

न्डन भवर्गत (জनारवरलत অভি উৎকৃষ্ট लिश्भा-थाक ছবি আমার নিকট বিক্য়ার্থে প্রস্তুত আছে। गुला / ।

००७, চिडिপूর (রাড কলিকাতা।

विषातिका नाथ ताग्र।

वागि इंश्ल इरेडि मग्ड स्थि अथार्थ खेयथ व्यानाइशाहि। छाइलिউमन इंजाि व्यामात श्वरुख श्रम् व इहेर्व। निम्न निष्ठ श्रम् अ वागान। खेषध अथादन शाख्या गाय।

আমার প্রণীত

হোমিওপ্যাথি চিকিৎ দা বিজ্ঞান যায় ডা কমাশুল

उम थए, उम मर्था। 3/0/0

२য় मश्थ्रा 310

रशिष्ठभाषि रेज्यज्ञ ३म मश्था वर्णादारगंत मदहोयश

রোগীরা আপন আপন লক্ষণ পাঠাইবেন

छोक द्वांदशंत यदशेष (इंगिअभाषिक (मिष्मिन (हिस्

खलां डेठांत २० मिलि वाका 30

30 निर्णाण वाक्न

এই বাকা এক খানি পুগুক থাকিবে যাহা ছারা

धरे कठिन व्याधि उ रेश्त नाना श्रकांत श्रीतवर्डी ज निजास मतल ज्याय लिथिज।

> শ্রীবিহারিলাল ভাত্তাড় ७८ नः कर्जअशिलमधी है।

यदगांत्र (लान (कान्यानी लियिएड यूलधन २०००० विन इं जात होका, छाडि अश्म मम होका।

১৮৬७। ३० व्याहेनानूमाद्र, छेल (कान्यानी ञ्चारिण अ (র জে ফ রি র ভ ছ ই য়াছে। কোম্পানি मः श्रांशान जिल्लां । जिल्लां कि जा निया छान छाइन करा ध्वर के दे प्ला माध-(नत জना जनार (ग कर्चा कता जनमाक जोहा করা

यां इ जिट्छ (य (क इ का न्ना नित्र यून ध त्नत जा श গ্রহণ করিতে ইচ্ছ। করিলে আগামী জোষ্ঠ मारमत मरधा गिनि यज जाश्भ लाईरज हेक्हा करत्रन তौरा वांगां क लिथिज शर्जत षाता नां म निवामां नि मह ज्वां ज कब्रिदन। (कांन्थां-नीत्र कार्या मश्रस्त (य (कान विषय (कइ जानि-তে ইচ্ছা করেন তিনি যশোর লোন কোম্পা-नीत कार्गालरा जागत निकढे जाथवा छ काम्यानीत शक्य भारम (मरनिष्धः ডित्तक हेत बीयुक वांतू शार्तित्यां इन छ इ यदां भारत त निक छ छ। उ इइटिज शादिद्विन ।

> बीकानीथमन (मन (मटक्डि ति लान (काम्भानी यदभात

উ खु । ख (थ्राम ।

बीठका (भंशत गूरशांशांश छानी छ। मुला धक दोका छाक माञ्चल % जाना। ०० नः कल्ल छोड क्रानिः लाइबादिङ थाश्वा।

NOTICE.

The connection of Baboo Doorga Churn Benerjee with the "Beadon Press" has ceased from the 12th of April 1876. In future all orders to be given and remittances made to the undersigned.

Dated Doyal Chand Sahovie 6th May 1876. Proprietor, Beadon Press.

मकः याना याना था थि

बीयुक वावू नेश्वत ठका च्छो ठाया अलाका ' ' अम्मा श्रमाम जनी निष्ण खेनी माम्य ' ' शृबं हज्ज त्रांश सशस्यानिश ' ठस्पकां छ तां य कां भी भूत (कन्त्रा यश्यानिश ६ ' 'কেদার নাথ দত্ত কাছাড লাইবারি উত্তরপাড়া

श्वीयुक्त वां वू क्वि यां इन यूर्था शाश कृष्यनगत রাজকৃষ্ণ বন্দ্যোপাধ্যায় এলাহাবাদ

' আभनम नाथ तात्र मूलक ९ छ भ

' कूछविश्ती वल्नग्राभाशांश भारश, इल्वात्।। ' জগবন্ধ চক্রবর্তী বৈরা, মানিকগঞ্জ

' शािविन्म लाल तांश कुष्धियांग, त्रभूत ' শ্যামাচরণ ধর বহরমপুর

এইচ ক্ষেরাইন লাহেব চুঁয়াডাজা

बीयुक वार् इशीवत मिक इकी छाना यदणात

' তার। প্রসাদ চটোপাধ্যায় বহরমপুর

' कामाथानाथ मूरथाभाषाम न जनाः वस्न -

' वित्नाम विश्वी (होधूती वाक्रेशूत

' किनाव ताम ভऐ कोशो वैं। किनूत

बि (गाइन वाणाया देव कि मास्त्रिश्न

' রামরত মজুম দার ভাগলপুর

' গুরুদ্রাল দাস গুপ্ত টাঙ্গাইল

অমৃত বাজার পত্তিকা।

मन >२४० माल ००(ल रिवलाथ, ब्रह्म्अिववात्।

রাজ নৈতিক একতা।

लहेशा পालि शार्यात उर्क इस उथन नर्ज माम्बर्धिम-এত দ্বারা সর্বসাধারণকে জ্ঞাত করা বরি ভারতবর্ষবাসীদিগের এ সম্বন্ধে কি মত তাহা জানিবার নিমিত্ত ব্যস্ত হন। তিনি অন্তোপায় হই ব अपने इहेट निकात ऐप्लिम हेश्न ख य ममूनम युबक भंगन कतिया ছেन তাহ। দিগকে निজ গৃহে निमञ्जन করিয়া তাহাদের নিকট এ সম্বন্ধে মত জিজ্ঞাসা করেন।। युवदकता हेशत विপक्षि मङ थानान करतन। माक्रिम-वित यूवकितिरांश यञ উল्लिখ कित्रां शालिं शार्यां । वलन य ভाরতবর্ষবাদীরা এস্প্রেদ উপাধির বিপক্ষ। উপাধির मপক্ষ मভারা ইহা আহা করেন না। ভাহারা বলেন যাহারা মত প্রকাশ করিয়াছেন তাহারা শিক্ষা উদ্দেশে এদেশে আগমন করিয়াছেন। তাহাদের মতামত গ্রহণ করিয়া রাজকার্য্য নির্বাহ করা যায় না। এই যুবকেরা উপাধি मद्यस्य यय ये ध्वान करतन এদেশের অনেকের বোধ হয় এই রূপ মত। কিন্ত इंश्रा शिष्छ नन अई निमिछ शालि यारमि इंशरिष्त या थाश इहेल ना। हैं श्रा यि मिष्ण तर्शाथाथ इंडेटिन यिषि ७० जन ना इंडेश ७ (कां हि लाक डेलाशित विशक्ति ये थानान कित्रिकन जोशे श्रेल श्रंक यह तानी अल्थम উপाधि अञ्ग कतिएक ना। जाश इहेल উপাধির বিপক্ষ দলের অসংখ্যগুণ বল রদ্ধি হইত। পক্ষ দলের অনেক স্থায়পরায়ণ ব্যক্তি হয়ত ডিসুরেলি-কে এবার পরিত্যাগ করিতেন, ডিসরেলি স্বয়ং অপদ্স্থ হইবার ভয়ে এ প্রস্তাব পরিত্যাগ করিতেন এবং মহা-রাণী হয়ত এ উপাধি গ্রাহণে মত প্রদান করিতেন না। गश्तागीत এই উপাধি গ্রহণে আমাদের মঙ্গল কি व्यमन रहेशा एक, जारा वागता जानिना। किन्छ हिरा षात्र। यपि (कान क्रथ अयमन इय जारा इरेल जात्रे-वर्षवामी पिरगंत छेपामा प्रात्रा ভात्रवर्षत (य मकल व्यम्भेन इरेशाएक वार्शित याद्या व वार्त वक्षी थाकित्व।

> मि याश इडेक এस्थिम डेश्राधि लहेशा कर्क प्राता আমরা এবার একটা বিষয় বুঝিতে পারিলাম। ইং-लए पलाप लित यक्ष यँ है जा शास्त्र आभवा यज्ञ करितल (मथानकात प्रलाप लित पाता आभारपत जार्थमा করিয়া লইতে পারি। মাসম্যান বাঙ্গলার ইতিহাতে लिখिরাছেন যে यখন মুসলমানেরা পরস্পর এই রূপ काष्ठीकाष्टि क्रिडिल्ल उथन वाङ्गालिया गत्न क्रिल অনায়াদে আপনাদের অনেক স্বার্থ সাধন করিয়া लहेट शांति । এখন क्रांका, क्रांबा, क्रांबा প্রভৃতি দেশ বাদীরা হয়ত বলিতেছেন যে যদি হিনুরা স্চতুর इरें जारा रहेल रेल्लाखत अरे मलामलित (अर्ल তাহারা রাজনৈতিক জগতে অনেক পরিমাণে পদই इइेटि পারিত। ইংরাজেরা যত খেলওয়ারই হউন তাহাদের মাঝে মাঝে খেলাতে ফাঁক যায় এবং এই ফাঁক বুঝিয়া যদি আখনরা কাজ করিতে পারি তাহা इहेल जागता करम इहे अक भा अधमत इहेर भाति। এরূপ অগ্রসর হইতে হইলে ইংলওে যাহাতে আমরা भाष्य इचे अक्रथ यञ्च कता छेडिछ। इंश्लाए भाष्य

रहे मिथानकात श्रमञ्च वाज्जिता याहार जागार्वत আত্মীয় হন এরূপ কোন উপায় করা কর্ত্ব্য।

इंश्निए त पित्र जिंशी इंश्ता जिता जातक जाशि वां गापित नाम इर्फणाथन। देशता ভात जव दर्घत প্রকৃত বন্ধু। যুবরাজের ছিলু পরিবারে প্রবেশ সম্বন্ধে यथन (गोलर्यां ग इय मिरे मगरा लिवत्र भूल इरेड এक জন ইংরাজ আমাদিগকে এক খানি পতা লিখেন। সে পত খানি পাঠ করিলে আমরা অনায়াসে এটি বুবিাতে পারি। আমরা ইংলতে গমন করিয়া ভারতবর্ষের নিমিত্ত রোদন করিলে ইহারা আমাদের সঙ্গে রোদন ইহাদের সংস্কণ্প যে কোন ব্যক্তি বিপদাপন হইয়া রাজাদিগকে প্রদান করিয়াছেন এবং এখন গ্রন্থে-क्तिरवन। আমরা চীৎকার করিলে ইহারা চীৎকার করিবেন। আমরা পদ ধারণ করিয়া ভিক্ষা প্রার্থনা कित्ल इशां अप भारत कित्रा जिक्का कित्रिया। আবার ভারতবর্ষস্থ ইংরাজেরা আমাদিগকে যত তাচ্ছিল্য কৰুন ইংলণ্ডের ইংরাজেরা তত্ত তাঙ্গ্ল্ল্য করেন ना। वत्रमा ममस्य यथन लर्ड नर्थकक অविচাत कर्तन তখন তাঁহার। ইহার পরিচয় প্রদান করেন। হলকর अ मिन्सियाय यथन माका इय उथन जाशाय इशाय পরিচয় প্রদান করেন। এস্প্রেস অব ইণ্ডিয়া উপাধি সহস্কে তাহারা ইহার পরিচয় প্রদান করিতেছেন। ইংলগু इडेरता थित यथा श्रिज। इडेरता थ मजा जाता वाथात। मिथान कान को भानयां छे ठेलि इंश्वाका जारा উপেক্ষা করিতে পারেন না। ইংরাজী সমাদ পত্রে यादा উঠে তাदा অবিলয়ে ইউরোপ, আমেরিকা बगिशिया পড়ে। ইংরাজেরা আমাদের কথা উপেক্ষা कतिए পারেন কিন্ত ইউরোপ কি আমেরিকার লোক বাঙ্গালিদিগের মত অগ্রাহ্য করিতে পারেন না।

णाति জन स्मिकिन अ नियार्थ (मर्गाइरेन्सी यमि इंश्ना ख वाक् कि करतन ववं का का कि माव के का थां क यह पर भारत यह ना भारत जाहा इहेल जाहाता ञ्नाशास्म পদञ्च इहेश मं ए । हाई र भारतन। ठाति जन স্থাশিকত যুবার ইংলণ্ডে অবস্থিতি করা অসাধ্য व्याभात नरह। याम इहे हाजात छोका वाय कतिल मग्रा ভারতবর্ষ হইতে ২৪ হাজার টাকা সংগ্রহ করা कर्ठिन गांभात नरह। आवात स्विधा कतिया पिल इश्राप्तत इश्लाख जविङ्जित निमिज जामाप्तत जर्थ প্রদান করিতে হয় না। যদি ভারতবর্ষের স্বার্থ সাধন উদ্দেশে কোন উপযুক্ত লোক ইংলণ্ডে এক খানি সমাদ পত্র প্রকাশ করেন তাহা হইলে তাহার টাইমদ টেলি-গ্রাফ প্রভৃতি সন্থাদ পত্রের প্রকাশকগণের ন্যায় উপা-र्জन ना इडेक डाश्रंत निक राग्न চलिएड প्रारत। (वाध इय २० श्राकात छोका मश्राष्ट्र कतितल अहे क्राय अक श्रानि मशाम পতा इश्लख इइए७ প্রকাশ করা যায়। এরূপ মহৎ উদ্দেশে বিশ হাজার টাকা সংগ্রহ করা বোধ श्य कठिन व्याभात नरश आभाषित এक জन वकू দেশের বাণিজ্য উন্নতি সাধনের নিমিত্ত যত্নশীল সময় দিলীশ্বরের যে রূপ পদ ছিল ভারতবর্ষে ইংলণ্ডের इहेशाएलन। जिनि हिमांव कतिशा (मिथिशाएलन ध्य, इल्ल शिया यिन अपनि शिया अकरी अकरी अजन्मी कात्रम स्थिन करतन जाश श्रेटल (मर्गत जार्भविथ डेशकात इया अथन अरमम इहेट यम ममूनय जना हेल्ल छ त्रथानि इय जाश देश्तां विनिकिमिर्गत इराउ পড़। इशाटि अपनिनी स्त्रत। अपनक मगरा विश्विष्ठ इन। इंश्लिए छेशयुक्त (कान वाकि यमि ५३ क्रथ कान कार्या আরম্ভ করেন তাহা হইলে আমাদের বাণিজ্য ব্যবসার উन्नि इत्र এवः আभता साथीन ভাবে वावमात्र कतिए শিক্ষা করিতে পারি। এখন বিদেশীয় অপরিচিত- তের অধীন ইহা প্রমাণ করিয়া দিল্লীশ্বরী হইবেন। ইহা দিগের হত্তে সর্বাস্ব অর্পণ করিয়া যেরূপ চিন্তাকুল প্রেমাণ করিবার সময় গ্রন্মেন্ট স্বাধীন রাজাদিগকে হুইতে হয় তাহ। আর হুইতে হয় না এবং তাহা হুইলে তাহারা যে সনন্দ প্রদান করিয়াছেন তাহার উল্লেখ উচিত অথবা আমাদিগকে ইংরাজ জাতির আয় ক্ষমতা আর একটা হয়। ইংরাজেরা এদেশে বাণিজ্য সম্বন্ধে করিবেন এবং যুবরাজ ভারতবর্ষে উপস্থিত হইয়া যে । দেওয়। কর্ত্ব্য । যত দিন এই ছয়ের এক না ছইতেছে যত আঘাত করিয়াছেন ক্রমে হয়ত তাহার প্রতিঘাত উপস্থিত হইতে পারে। এরপ একটা বাণিজ্যালয় श्राभन कतिएक २० शाकात छोकात অधिक वात्र भएड অবং বিশা হাজার টাকা সংগ্রহ হত্য়া তত কঠিন वार्थात नर्ह।

তবে इश्लए अम ज्याभन कतिवात भूर्वि (मर्भत लि'दिकत এक छ। वस्नुत्न आवस्न इछ য়। উচিত। স্বদেশে ताकरेनिङ्क अक्छ। ना इहिल विष्ट्रिण खायता किक्ष পদস্থ হইব? এই একতা সংস্থাপন উদ্দেশে লীগের रुखि इहेशार्ष, अखडः लीशा এখন याहाता आर्ष् ठाँशामित এই देण्हा। এই निमिज ठाँशाता देशत সভ্যদিগের বার্ষিক দানের পরিমাণ এরূপ অলপ করি-श्राष्ट्रम। এই निमिछ ইश्रा श्राप्त श्राप्त अध्वा প্রেরণ করিবার যত্ন করিতেছেন এবং এই নিমিত্ত তাহাদের আশ্রয় লইলে তাহারা সাধ্যমত তাহার টের সঙ্গে এই উপহারের সংস্রব রাখিতে হইলে গ্রন-छे थका दित व क कि दिवन। जिन मी श्र व वि इंश पित উদ্দেশ্য স্থাসিদ্ধ করেন তাহা ইইলে ইহা দ্বারা বিশেষ मञ्जल रहेरव।

यू वतार जित था थ छे थ छे । युवताज এখানে কোথায় कि উপহার প্রাপ্ত হন এवर কোথায় कि डेशहांत थानान करतन हेहात अक्री তালিকা এদেশের কোন এক সমাদ পত্রে প্রকাশিত र्य। তাलिकाणै देश्ल एखत ख्याल ए नामक मनाप পত উদ্ধৃত করেন এবং ওয়াল ড হইতে ইংলওের অন্যান্য मचाम পত्र डेक् ड इय़। এ দেশীয়েরা অনেকেই ইংলিশ গ্রন্মেন্টের উচিত ছিল যে ভাঁহাকে রাজার জানেন যে যুবরাজ রাজাদিগের নিকট হইতে যে মূল্যের উপহার প্রাপ্ত হন তিনি তাহা অপেক্ষা অনেক छ एवं जन्म मुलात छे भरात डाँ राति व छा भेव करतन। देश्ल एखत जाति कत या वित जनगात्र कतिया ছिन। इेल्ल छ याँशाता ताज मलक छाँशाता विलिटिएम य युवताक जाला मूलात डेलशांत छामान क दत्रन नाई, এवः छोई गरमत मत्राम मार्ग निध्या-প্রায় এক মূল্যের হইবে। যুবরাজ যদি অপেক্ষাকৃত তাহাতে তাঁহার পদ গৌরব রিদ্ধি হয় নাই। এদেশের অলপ মূল্যের উপহার প্রত্যর্পণ করিয়া থাকেন তাহা इहेल (य ज्यात्रां क्रिय़ा हिन जाहा मकल्वह स्वीकात हिहात विछन ज्य वात्र क्रिय़ा थारकन। ज्याक করিতেছেন, তবে যাঁহারা বলিতেছেন যে তিনি অলপ সাধীন রাজা কলিকাতায় আসিয়া ইহার অপেকা মূল্যের উপহার প্রদান করেন নাই ভাঁহাদের কথা অধিক দান করিয়া থাকেন। তিনি যদি এদেশীয়-বিপক্ষেরা বিশ্বাস করিতেছেন না। যুবরাজ কি দিগের প্রতি বিশেষ কোন একটা অনুপ্রাহের চিত্র কি উপহার প্রাপ্ত হইয়াছেন তাহার তালিকা যদি দেখাইয়া যাইতেন তাহা হইলে ডিসরেলির মহারাণীকে রাজ পুৰুষ্টেরা প্রকাশ করিতেন তাহা হইলে এ এস্পেন উপাধি প্রদান করিতে এত কট হইত ন।। भानात्वाभि इहेड ना। डाँहाता हेहा अकाम ना युवताष्ठित अधारन कि छाव आभारन कता कर्डवा अवश করাতে এই গোলযোগ আরও রদ্ধি হইতেছে। যদি এখানে আদিয়া ভাঁহার কি করা কর্ত্ব্য এ সম্বন্ধে इश्लिम भवन (यत्छेत এই উপহারেत मद्भ ता जनी जित (कान क्रथ मध्यव ताथा উप्लिमा ना थाकि । इहिल रश ७ देश लहेश। ७ र्क विङ्क रहे जन। किन्छ जाराता. ताकानीजित मदन देशत मर्ञ्य ना ताथिएन जाशापत (वाथ इश अजीके मिन्न इहें एउए ना। इंश्लिक ग्वर्न-(यटिन जातिक मिर्नित देण्ण्। (य यूमलयान ताजा मिर्गत রাজার সেই রূপ পদ হয়। আজ ১৫ - বংসর প্র্যান্ত इंश्तां (ज्यां वहें श्रेष ल्यां खित निमिज युक् कतिराज्य এवः धरे অভीके मिश्चित निमिन्न (वाश र्य युवताङ विशासिक जाशियन कर्तन। विश्व नियिख लर्ज नर्थक्क প্রাণ পণে স্বাধীন রাজাদিগকে দরবারে আনরন করি- তাহাকে তাহারা চিনিয়া লইতে পারে। কিন্তু অনেকে বার যত্ন করেন এবং এই নিমিত্ত ডিসরেলি মহারাণীকে দিশবার দেখিয়া যুবরাজ কে তাহা ছির করিতে পারে এক্সেम অব ইণ্ডিয়া উপাধি প্রদানের প্রস্তাব করেন। यशानी अथन अल्लाम छेलाधि अश्न कतितलन, देशत পরে ক্রমে ক্রমে স্বাধীন রাজারা যে ইংলিশ গ্রন্মে-मभूष्य उपश्व थाथ इहेबाएल जाहा ब उद्या उठ दिन व (गालियां गाहेर उट्या। कतिर्वन। ञ्चताः अथन अहे मम्बर छे शहारतत मर्ज গ্ৰন্থেণ্টের সংজ্ঞৰ আছে ইহা স্থীকার না করিলে পরিণামে এই উদ্দেশ্য সামনের ব্যাহাত হইতে পারে। किन इशाउ अकी लालायां डेशन्ड इशाए

विधिण श्वर्धिमणे यथन याथीन वाजामिरशव निक्छे হইতে উপহার প্রাপ্ত হন, তাহার অধিক মুল্যের উপ-হার আবার তাহাদিগকৈ প্রত্যর্গণ করেন। রাজা-দিগোর অপিত উপহার সমুদয় রাজ কোষে সঞ্জিত इहेश विक्रय इहेश यु होका मः श्रह ह्य छाहात अधिक यूलात छे शहात ता जाता था छ इहेशा था किन। এ पिल विणिण गवर्गायित उ याथीन ताका फिलात महन छेथ-तका करतन नाई। जिनि जन्म मूलात छे भरात स्वाधीन यान्छे क अभिष्ठ इहे ए इय छ्डता छे भहात लहेगा ग्वर्गरमन्छ किছू माऋ हि शिष्या हिन।

युवताक कि উल्लिक्ष अल्लिक आमिशा ছिल्न ভাঁহার আদার পুর্বে ভাহার কোন রূপ নাব্যম্ভ হয় ना। এই निमिज এই ममूप्य (भानर्गा डेशश्रिक इहेट ए । याशीन ताजाता इश्र काहारक हेल्ल एवत ভবিষ্যত রাজ। বলিয়া গ্রহণ করেন নাই এবং হয়ত जि.न छ जानक छ। तन जा भना कि इश्न छ विषा छ রাজা বলিয়া পরিচয় প্রদান করেন নাই। যুবরাজের वागगरनत मदन ताजनी जित मः खव ताथ। इन्हा था किला नामा अफ्टल (थात्रन) कर्त्रन। इश्त्रां कारनन य এদেশের লোক রাজাকে রাজ্যের সক্তের্জ লোক विन्यां जारन। जाश्रां जारन य यि यि निव ताजा निर्विष्य প্রজার প্রতি কোন রূপ অত্যাচার করিতে না পাকন, প্রজাকে অভ্যাহ করিতে তাহার নর্বতোভাবে ক্ষমতা वाष्ट्र। किन्छ थिन अपिएल वाश्यम क्रिया जार्य (कांन পরিচয় প্রদান করেন না। তিনি বোষাই, याखाङ, এবং কলিকাভায় যে मायाश দান করিয়াছেনঃ मायाना রাজার। অনেক मयয় निজ রাজ্যে গমন করিয়া এদেশীয়দিগের মত যদি গ্রহণ করা হইত তাহা হইলে भवर्षरम्ब नाना भानायाभाष भिष्ठ इहेट इहेड ना। ताजारक गांध कि इखी जीकात कतिएक (मिश्रा) इंश्ता-জिंगित मत्न डाँश्त थिं जि जि जि इहेट भारत किन्न ध-(मनीरয়त। ও मয়्मয় রাজার কার্যা ম.ন করে না। প্রত্যুত ताकाता अक्रथ कार्या यणि क्याग्ठ मग्र अভिवाहिड করেন তাহা হইলে তাহারা ছঃখিত হয়। যুবরাজকে দশন করিয়া অনেক অজ্ঞ ব্যক্তিরা নিতান্ত নৈরাশ इয়। এদেশৌয় রাজার ভাষ ভাজ পর। পরিচ্ছদ আচার ব্যবহার সমুদ্য স্বতন্ত্র হওয়া আব্শাক। काछि काछि वाङिकितात यक्षा बाङा थाकिला नाई। ञ्चताः यनि युनतार्जत ভात्र मन्नि लहेता (कान क्रथ (भानर्याभ इहेश थार्क ভ्राव भवनरम्हे णाशं निएकत (मार्ष कतिशाहिन। इरताक्षिर्शत এদেশে প্রীতি ও ভক্তির ভালন হইতে হইলে হয় वाशादमत अदमभीय तीं जि जी जि जानमधन कता

भारेक वर्शत मात्र । जार ए, नात तिवाप (वेरम्भ-लित जञ्जार उपाइ ताजमारीत जक्ति युवा थान प्र হইতে নিস্তার পায়। সম্প্রতি লড লিটন আর এক

बाजिएक এই আসুরিক রাজ দণ্ড হইতে রক্ষা করি-श्राष्ट्रन। এই वधा অপরাধির প্রাণ রক্ষার নিমিত্ত श्राहेरकार्ट आर्वान करा इया श्राहेरकार्ट आशील व्यथाश करतम। जाशत शरत श्रामीय भवर्गियले व्यथ-त्राधी व्यादनमन कदत्। ज्ञानीय भवर्गप्रने उ जाहा व्याहा करतन ना। जश्भरत (म भवनंत (জन: तिस्त निक्छे वादिष्म कदत এवः लर्ज लिप्टेन डाश्त वादिष्म थाश कतिया ছिन। लर्ज लिए तित अहे कार्या प्राता व्यागता (य कि পर्या ख व्यानिम् इ इ या ছ वाक्ष व विल व शांतिना। তাঁহার পিতা প্রাণ দণ্ডের বিপক্ষে ছিলেন তাঁহার পিতার নিকট হইতে প্রাপ্ত হইয়াছেন। লেখ-কের মনের ভাব যদি তাঁহার লিখিত বিষয়ে ব্যক্ত इ अर्थात म अर्थातमा थारक, जारा इहेल मकरल स्वीकात क्तिर्वन ध्य, लर्ज लिए दिन त भिष्ठात ज्ञानिय प्रशा उ स्वर ছिल, এवः विथाजा इंश्ताक्रितितात नाग्य किर्वन नित्रम (लोश द्वाता ठाँशत क्षत्र गर्यन कतिता हिलन ना। लर्ज लिंग्रेन यि जांश्रा शिकात এই मम्मग्र मर्थ खन প্রাপ্ত হইয়া থাকেন, তবে তাঁহার রাজত্বকালে যে मकल्ल सूर्थ थाकित्व जाशा जागता कडकछ। जाभा क्तिए भाति। তবে लर्ज नर्थक आयाि मिर्गिक य यनखाश पिय़ाट्चन जाशाट्ज (मक्तश जाभा क्रिट्ज व्याभौष्पत्र माहम इय ना। लर्ज लिए त्नित्र यिन कामल ममून्य পরिजाभ कরिल्ड भवर्गराने त रुपस रस, जारा रहेटल जिनि (पिथितन (य, এपिलात मखिविधि थानानी वा जिना स ज्यानक। धेरे ज्यानक व्यमाली द्वांता कड भड निर्दाशी वाङि कर्ठात ताङ व्यान पछ इहेशा थाकि। जिनि यपि अञ्भाह कतिशा मण विधि आईन दाता (परभात अशकात कि डेशकात इहेटण्ड इहात अञ्चनक्षांन करतन এवः এ विषय मश्रक्ष गावर्गराने य मगूमग्न तिर्णाई श्रकानाः कतिया थारकन छार। পाঠ करतन छार। रहेटल छिनि জानियन (य, এখানে কত সময় উচ্চ তম রাজ পুরুষের এ বিষয়ে হস্ত-(क्य कर्ता आवणाक इस अवः अक्र र खरक्य ना कतितल कड निर्द्धाधीत छोग पण इत छ (पर्ण कड

অত্যাচার হয়। क मश्रक्त वाक भागरक लोहे नामक क्र थानि भूखिका পলি য়ামেণ্টের কোন কোন সভ্য প্রস্তাব করেন যে, उदर्कत अहे क्रिश भी भाशमा इहेशा एक उथन लाय इश ভুমণ করিতেছেন না। এবৎসর যখন ত্রিহুতে আবার কি এদেশে সংকৃত ভাষার চর্চা উঠিয়া গিয়াছিল? ত্রভিক্ষের আশস্কা হয় তখন গোডিজ সাহেব ইহা অত্ন- বান্ধব স্বদেশ পক্ষপাতী। । তিনি মেকিয়াভে,লকে সন্ধান করিয়া গ্রাণ্টে যে রিপোর্ট করেন তাহা কণিকের শিষ্য বলিয়া ব্যাখ্যা করিয়াছেন। কিন্ত বোধ হয় সকলের মারণ প্রাছে। এই রিপোর্টে তিনি বোধ হয় তিনি একটী বিষয় স্বীকার করিবেন যে দরভাষার নাবালক রাজার জমিদারি কার্য্য প্রণালীর গুরুর উপদেশ অপেক্ষা শিষ্যের উপদেশে অধিক প্রতি অতিশয় দোষ অর্পণ করেন। অনেকে অত্নমান ফলোৎপত্তি হইয়াছে। হয় ভারতবর্ষ এরূপ স্থান करतन था, भिष्म मार्ट्य मील कूर्विशालिम शिव विकासित निय थि, अथान अ ममूनश छे भारत वीक इहेरड সস্ত্রান করিবার নিমিত্ত সেখানে গমন করিয়াছেন। मात्र तिराष्ट जात्मक विषय शाशालि जञ्जनक्षान कतिया। थां किन এवः অনেক विषय शांभित अञ्मक्तान क्रिय शांशित शांशित जाहात शक्तिवादनत यक कदतन। नील कुठिशास्त्रता डाँश्त नूता उन बक्। डाँश्त डातड-

वर्ष পদাर्शन कता व किছू দिन পর তিনি নীল কুঠিয়ালগ-ণের অত্যাচারের অত্সন্ধান দ্বারা প্রথম খ্যাতি লাভ करतम। अञ्जाः जिनि जानित्य, नील क्रियालगन कि ভয়ানক লোক ও তাহাদের সঙ্গে কি ভাবে চলিতে र्य। जि.न मञ्चठः (भाशन अञ्मक्तान द्वाता প্রজা-निरगंत व्यवश्रा नितीक्ष कतिया कू रैयानिनिर्गतक णिकिश, मठर्क कितिशा पिर्वन এই क्रिय अভिशाश किति-शाष्ट्रन। वाङ्गानात कू ठैशालगर्धत वाङ्गाहात यिष्ठ किछ िए हिनकत मार्य, हिन्दान म! रहव এव व्याश এবং বোধ হইতেছে তিনিও এই সাধু ও দেব ভাব | কমিসনারগণ যে ইহার পোষকতা করেন তাহারও কোন जुल नाई, ञू उतार मात ति छार्ज यि (वशादत वर्ष-শাन्ति अङ्गापिशःक कूठिशानगर्वत অত্যাতার হইতে উদ্ধার করিতে পারেন তাহা হইলে তিনি সহঅ পরি-वात्रक जनगन इहेट तका कतिर्वन। ख्रा थियी-ড়িত হইয়া यদि नियूल হয় তাহা হইলে পরিণামে श्वर्थियन्छे क्षाि शक्ष इन। यमि नीन कूछिशालशद्भात অত্যাতারে গত ছর্ভিক হইয়া থাকে তাহ। হইলে कठक छिलि देश्ताङ वावमाग्रीत निमिछ भवर्गस्यति थाय १ (काष्टि छोका एख इहेल। এ वश्मत्र आवात সেখানে কতক পরিমাণ ছর্ভিক্ষ উপস্থিত হইয়াছে এবং ইशात निभिज्ञ भवर्गराग्छेत वाग्न इहेर्डिए। अर्मा कर्मा श्वार्थत निमिज (वशारतत नी नकति पित्रत कार्या व्यवानीत वाञ्मक्यान करा कर्डवा।

े आगता अत्नक मिन शदत "वाञ्चद्वत" मर्गदन माजिलाय मन्त्रके इड्लाम। এদেলের এক এক খান মাসিক পত্ৰ প্ৰকাশিত হইয়া কিছু কাল লীলা খেলা क्तिया व्यक्तमा व्यवश्रान इय। व्यामार्मत चय इहेया-ছिल वृति। वाञ्चरवत मिहे मना छेलाञ्च इहेशाए। किन्छ वाञ्चव धवात श्रुष्ठ भूष्ठ कल्वदत डेशिष्ट्र इह-য়াছে। আমরা বান্ধবের লিখিত সমুদয় প্রস্তাব গুলি পাঠ করিতে পারি নাই। স্থতরাং এবার ইনি কোন্ অঙ্গে কি রস ধারণ করিয়া উদয় হইয়াছেন তাহা আমরা मन्भा नं ऋथि ज्यवशं निष्। ज्य जायता "किनिक श्वणित" आद्माशाख भाठं कित्रशिष्ट्। वाञ्चव इंडे-আমরা অবগত হইলাম যে, সার রিচাড টেম্পেল রোপের বিখ্যাত পণ্ডিত মেকিয়াভেলির রাজনীতির নৈপাল হইতে বেহারে প্রত্যাগমন করিয়াছেন এবং সঙ্গে কুঞ ছৈপায়ন বর্ণিত কুঞ রাজ মন্ত্রী কণিক রীদ্রেরোদ্রে ভুমণ করিতেছেন। তিনি এই ভয়ানক রাজনীতি সম্বন্ধে যে সমুদ্র উপদেশ প্রদান করেন গ্রীত্মের সময় কি উদ্দেশ্যে স্থশীতল দলি লিং গমন না তাহারই তুলনা করিয়াছেন। অমৃত বাজারের সমৃদয় করিয়া উষ্ণতর বেহারের প্রখরতর আতপ তাপে ভুমণ পাঠকেরা যদি বান্ধব গ্রহণ না করিয়া থাকেন, তবে করিতেছেন তাহার কোন কারণ আমরা জানিনা। ছর্ভি- আমাদের অন্থরোধ অন্ততঃ তাহারা যেন ১১ সংখ্য वाञ्चव थानि भ ठे करत्न। जाशता इंशाङ क्निक প্রকাশিত হয়। এই পুস্তিকা দারা ছর্ভিক্ষ সম্বন্ধে নানা প্রদত্ত রাজনীতি সংক্রান্ত উপদেশ গুলি পাঠ ক্রিলে वर्क विवर्क छेटि । পालि शाम्मिन व वह वर्क छेटि । जानि जानि भाति व स्था कार्वित किन स्था हहेल, युमनभारनताई वा (कन तालाष्ट्राङ इहेलन এवर इर्डिक्त निभिज य राज्ञ इहेजाए जारात कातन है दार्जिता ना किन क्रिया क्ल लहेगा भूथियोत অহুসন্ধান করিবার নিমিত্ত একটা রয়েল কমিশন প্রায় অর্জেক স্থানে রাজত্ব করিতেছেন। তবে কণিক নিযুক্ত হউক, কিন্তু অধিকাংশ সভ্য ইহা অগ্রাহ্য স্থ্র পাঠ করিয়া আমাদের একটা বিষয়ে বিষয় করেন। পালি রামেটের দ্বারা ষখন ছর্ভিক্ষ সংক্রান্ত উপাস্থত হইয়াছে। যে দেশে রাজা এরপ সত্প-दिन मकल थाश्व इहेर्डन, मि दिन कि कि লেফটেনেন্ট গবর্ণর সে নিমিত্ত দরভাঙ্গা প্রভৃতি স্থানে পরাধীন হইল? হিন্দু রাজাদিগের শেষাবস্থায় কিছু লিখেন এবং টেম্পাল সাহেব এই হুই বিষয় অহ্ন- ফল পুষ্প স্থােশিভিত বৃক্ষ উৎপদ্ম হুইতে পারে অথবা ইश्त आत्र (कान कात्र थाकित्व। (মকিয়াভেলির उপদেশ দারা ইউরোপের লোকে পৃথিবীর উপর রাজত্ব করিতেছেন, আর কণিক স্থতের উপদিষ্ট बाक्तिग्न मागन्न गृधात्म आवन्न ति ति । जारादमत थ मामज (य कांन कांन्स भाषत शहर व डाइ। ७ (कइ

विलाउ भारत ना। किनिक (य भिक्शां जिल व्याभिका অনেক গুণে শ্রেষ্ঠ তাহা আমর। স্বীকার করি, কিন্ত मश्कृष्ठ त्रवनात এक वी (माय আছে। इशत अर्थ यूर्वाथा नर्श्र लाग्न जिन। इश्त जाव समग्र म्लाम कतात शृति डेश मिखिक म्लर्ग करत এवः श्रति প্রবাহিত হইবার পুর্বের উহার অনেক বেগ মন্দীভূত इन्या याय। वाक्षव ताजनीजिज्य प्याकिया जिल्ला मिक्ति, বিগ্রহ, দৈনিক নিয়োগ, স্বরাজ্যরক্ষা প্রভৃতি সম-क्रीय (य ममूनय डेश्रामण छिनित माज क्रिक स्वित जूलना कतिशाष्ट्रन, इंश द्वाताई (वाध रश अहे मथमान कतिराज्य । (মিকিয়াভেলির উপদেশ গুলি পাঠ-कतित्न भाग्रे कत नग्रत मश्मात आत এक क्रा थात्र कर्त, ज्थनहे मानत श्रक्ति পরিবর্তিত হয় 'এবং মনের মধ্যে দৃঢ সংকল্প আবিভূত হয়। কণিক ञ्च भाग्रे कतिल मर्काट्य किनिक्त छन्ना, तुषित (को गल, দূরদর্শিতা প্রভৃতির নিমিত্ত তাঁহার উপর ভক্তির উদয় হয়।

শান্তিপুরের লোকে শুনিয়া সন্তব্ধ হইবেন যে, त्राष्टिवर्ग मार्टिव माखि भूत मित्र। (तल अरत गंगन कतात প্রস্তাব গ্রন্থেটে করিবেন এই রূপ স্থির করিয়া-(इन। ग्वर्गायक यालाइत अवहत्रम्त श्रांख इरेजी রেলওয়ে নির্মাণের বিষয় সাব্যস্ত করিয়াছেন। রাণ্ট-वत्र मार्ट्य अञ्मक्षान कतिया (य तिर्पाष्ठे कतिर्वन (य, এই छूटेंगी রেলওয়ে দারা গ্বর্গমেণ্ট ক্ষতিপ্রস্ত হয়-रवन ना आत गवर्गराने देशत कार्या आतं कतिरवन । त्रां छेवर्न मार्ह्य श्रेष्ठाविक वहत्रभभूत (तलक्ता महस्त-অञ्चनक्षान करिया तिर्था छै॰ करिया एक एय, धरे तिल-एस दाता गवर्गिन कि अछ इहरवन ना जवर (वाध इय वहत्रभीत (तल अद्य पूरे जिन गाम পরে আরম্ভ इहेर्व। लर्ज इंडेलिक वार्डेन श्रेष्ठां कर्त्रन (य, अहे রেলওয়েটি রাণাঘাট হইতে বাহির হইয়া উলার यथा पिया भाषा ७ छे शिष्ट्र इहेर । कृष्यन गत्र वा मीता বগুলা হইতে গোয়াড়ি যা শুয়ার প্রস্তাব করেন, ক্রি त्राष्ट्रियं मार्ट्य मिथियाष्ट्रिय (य, (तल अस मा खिर्यूत मिया (भारत मर्कारिभका लंडा इहरव। (कान् स्थन इहरड यश्लाञ्त (तल अदा आंत अ इहेर का हात अथन त्युत इय नाई। त्राष्ठिवर्ग मार्ह्य এक वात मावास क्रिया ছिলেন যে, চাকদহা হইতে ইহা গমন করিবে, কিন্ত এখন বারাসত দিয়া নির্মাণ করার মনস্থ করিয়াছেন। তিনি বহরমপুর, কৃঞ্জনগর ও যশোহরের কোন্ স্থানে कि शतियात्व वाविषा जित्यात वायमानि तथानि इंडिश তেছে তাহা অত্নসন্ধান করিবার নিমিত্ত এক জন কর্মান, ठाती नियुक्त कतिया एइन।

य: नाइत त्राय था: यद रान। मचकीय शब थानि यथाश्वादन मित्रतिष्ठ इइल। এই थानि मकल्लेत्र भाष्ठ कत्रा कर्लगा। (व भिलाणी त्रायापारम जांक मीर्घकाल इहेट धा हिला जार्ह। वातू मो जानाश (शाय जह (मलात थहे तथ उत्रिक किति (क्रिन। मीकानाथ राष्ट्र (मलांत (यक्त १ छेन्न जि कित्रिया हिन, जारा (म. श्रा जामद्र) वाः जना मलुके इहेलाम। जत्य (मलात व्यथान छ। न्यन:-**जीत व्यक्ति जैक्का अथन अ मृश्वि शए** नाई। जिनि श मिन धई यनात्र बात्रा यानाइत्वामीमिशदक धक च्राजा जावक क्रिएं शाहिर्वन मिन इश कर्ज़क विद्यां ये छे थका त इहेरव। (छेलि शाक, वर्षित कल श्राकृति) অভিশয় উপকারজনক निষয় বটে, কিন্তু উহার অভাবে वामादमब प्राथ्य वाद्यागि इइटिड्ड म। प्रभाव न वर्छमान इत्रवञ्चा यिनि मः मः नाधन कित्रवन जिनि (भर्भत मङ्गलित थाशम मार्थान मरङ्ग्राभन कतित्वन। क्रान योगा (मल। योत्रो पठी ज्यमिक इख्यो ज्यक्तिन। उत्त यानि यदणा ३ दब्र ब नान। ज्यादन अहे क्रिश (यन) ज्यित इब्र व्यवश्वक व्यक (यनात्र अधारक्ष्य) व्यश्त (यनात्र महक्ष (याश मान कर्त्रन, जारा रहेल क्रिम ममून यरणाइत-वामीमिद्शांत मद्या जोजो त्र छ। इहेट जादत।

THE AMRITA BAZAR PATRIKA.

CALCUTTA, THURSDAY, MAY, 11, 1876.

Chittagong is in an uproar. Babu Lul Chund, a Municipal Commissioner, dared to oppose the Chairman and he has been arrested by the Magistrate. A telegram has been sent to the Government and the Town is highly excited.

Babu Amrita Lal Dutta, the Police Inspector of Shyampookar Thana, we hear, has been suspended. This must be the ultimate fate of all true gentlemen who happen to be poor enough to serve in the Police Department.

It is expected that a paper manufacturing mill will be started at Surat, in July next, under native management. The machinery and appliances have already arrived and will shortly be put up. Bombay with its cotton mills, silk mills, and paper mills have deserved well of India.

The death of Mr. Vishnu Parushram Shastri, the proprietor of the Indu Prokash is indeed a national calamity. As clever as enterprizing, he spent a busy intellectual life for the advancement of his country's good. The Vedarthayatna, being a translation of the four vedas in monthly parts, was, we believe, started under his auspices. We sympathise with our brother of the Indu Prokash for this irreparable loss.

Mr. Girdharlal D. Kothari, President Arya Samaj, Bombay, writes us to say that a Company has been projected in Bombay by the Arya Samaj founded by Pundit Dayadanda Saraswatee with a view to publish the translations of the Vedas and other books of kindred nature into Hindoostanee language. It is to have a capital of 20,000 rupees divided into 200 shares of 100 Rs. each. Applications for shares should be made to the President of the Arya Samaj, Bombay.

The Raja of Mahisadal founded a scholarship of of rupees 5 a month to be awarded to the best student of the Midnapore High school, who fails to obtain a Government scholarship at the First Arts Examination. The Government has thanked Baboo Luchman Prosad Gorgo for this endowment. Now this Luchman Proshad is the heir and representative of the noble family of the Gorgos who have enjoyed the title of a Raja for the last twenty generations. The reward of the Raja for his generous gift is that he has been simply insulted by Government. We recollect to have seen somewhere Babu Kamal Krishna Deb of Shobabazar thanked Covernment for a munificient donation.

Mr. Damant, Assistant Deputy Commissioner ----of Cachar, is said to have ordered a peon to pull the ears of a pleader and to turn him out of the court. The pleader brought the matter to the notice of the Chief Commissioner, but no reply has been as yet given to his petition. A civil suit is also contemplated, but we believe it will entirely depend upon the decision of the Chief Commissioner whether such a suit is to be brought or not. If the Assam Government makes an inquiry the matter and affords relief to the pleader if really deserves it, the matter will not proceed irther. We shall give further particulars at a proper time.

Mr. Manson, the Magistrate of Noakhalee, bitterly complains that the members of the Road Cess Committee in his district do not take any interest whatever in the work of the Committee. He says: "The Committee is little better than a farce, the Road Cess Act and the business done under it are regarded purely Government measures, and the Chairman and the Vice-Chairman are the real managers of the whole. Non-official members take little or no interest in the matter of local improvets, and of official members, the Executive Enincer has not been here once during the year. Some difficulty has been experienced in getting together a quorum for the transaction of business as required by the Road Cess Act, and the meetings had to be adjourned on several occasions in consequence. A meeting was convened on the 3rd instant to consider the annual accounts for the past year under Sections 88 and 89 of the Act, but as no quorum was found, the accounts are submitted under the Chairman's counter-signature, because to call a new meeting to elect a Sub-Committee and a ain call a Committe to have the accounts, will take two or three months more. The Committee is an irresponsible body, and hence care little about the accounts." The Magistrate lays the whole blame upon the members: did it never occur to him that he himself or the system might be at fault? Man must always love power and hate slavery. If the Magistrates allow the members to exercise powers, they will feel interest in the work. But nobody will choose to be a dummy if he can help

last that Sir Richard Temple has undertaken the enactment of a substantive law for the determination of rent in Bengal. The task that the Bengal Government has taken in hand is so important, that the prosperity of the country will depend upon its successful accomplishment. It were infinite times better to have the present state of affairs continued, than to have a change for an idea which may throw the whole landed interest in Bengal into a greater disorder. That some change is necessary it is absolutely certain. Beneath a calm, now and then disturbed by an vebulition, either in the shape of a riot or a famine, a vast volcano is at work destined one day to sweep all interests in land by one sudden rush. The thanks of the nation are due to the Lieutenant Governor for taking up the question, for he easily might have shirked it to be dealt with by his successors. It is not an easy task that he has taken in hand. It is not one that can be solved by a genius, a revenue officer, or a man of shining talent. No superficial understanding of the question will be of any help whatever. Indeed it is not a problem to be solved by a man of varied talents, but it is emphatically the work of a messiah. Whether Sir Richard Temple is able enough to grasp the question successfully or not is yet to be seen. We wish him god-speed, for the question vitally interests a hundred millions. But while wishing him success we would ask of all thinking Bengal to come forward with their facts, figures and suggestions.

But the outline of a plan of operation which the Government has published in the Gazette is not only not assuring but positively alarming. It is clear His Honor is not in possession of accurate information on the subject. It is clear also that those who have undertaken to enlighten His Honor have not studied the subject with that attention which the case requires. His Honor proceeds upon a wrong basis and the consequence is, that he arrives at a conclusion which is neither sound nor assuring. We are not opposed to the interests of Zemindars, no native of Bengal should be. The one great reason is that the Zemindars of Bengal are also natives of Bengal. They are as much our countrymen as the ryots are. Indeed what could we do for the furtherance of our country's cause without the money of Zemindars? But while the Zemindars are a necessity to the country so are the other classes, and that Zemindar is capable of committing suicide who can ruin his ryots to secure his prosperity. The British Indian Association admits that "a prosperous tenantry is a source of strength to the Zemindars," and it will do no good to a Zemindar to ruin his ryots and sow seed for a future trouble. The work which Sir Richard Temple has taken in hand is for the benefit of all classes, and both the Zemindars and ryots ought to come to an honest understanding between themselves and help Government in the matter.

If the Zemindars by their superior intelligence and tact can manage to have a law favorable to them, their triumph will be for a short period only. No human law can prevent a tenantry to take to clubs and spears when hungry and then the favorable law will not help them in the least. To bring peace in the land, to prevent future disturbances, to increase the security of land. ed property and secure the prosperity of the country, it is the duty of every loyal and patriotic Hindu to forget all self interest and to come to a mutual understanding about an affair upon which the welfare of the country depended. We deeply regret that the British Indian Association did not take note of these facts when it advised the Government on the matter. Its advice to the Government is so one-sided, that, if followed, the whole tenantry of Bengal would be levelled down to the status and condition of Tirhoot, and other Western ryots. Unfortunately Government took the clue from that body and thus founded the Resolution of which we are discussing. But Government has not as yet heard the other side of the question, and fortunately it is in the power of the nation to make known to the Government, the other side of the question

Sir Richard Temple divided the tenantry of Bencal into two classes viz, Occupancy ryots and tenants-at-will. Now this division is not only not comprehensive but fallacious. The idea of a tenants-at-will was imported from England by English statesmen who had no knowledge of the country. As a matter of fact no tenants-at-will existed in Bengal. It is unnatural that they should. There is no dearth of culturable land in Bengal, and tenants have never wanted lands as Zemindars have wanted tenants. Under the circumstances the poorest ryot would not simply consent to be a tenant-at-will. It is true, lands are now and then taken for a stated period, rarely, for more than a year, for the purposes of cultivation, but under no circumstances whatever, will a Bengal ryot erect his homestead upon a land in which he has no permanent interest and from which he is liable to be ejected at the will of the land-lord. This may be very common in England but the custom was never introduced here. Neither will the ryot consent to take a jumma in which he has no permanent interest Indeed there is a small quantity of land,

in every village which is not included under any jumma and is taken by the ryots generally for one year fer the purposes of cultivatin and then given up after the crop is gathered. But these lands are not owned by the Zemindars but the middle classes. Properly so called there is no tenant-at-will in Bengal and it is therefore somewhat staggering to see that the proposed system is to be founded upon the rents paid by this class of ryots!

The Act X of 1859 did not therefore secure to the ryots any right that they did not possess, but on the contrary, weakened the rights that they enjoyed from time immemorial. Before 1859, ejectment of ryots was utterly unknown and never dreamt of. The Zemindars could be deprived of their property but not the ryot. The term occupancy ryot was created since that period, but yet practically it did not interfere with the relation between landlords and tenants which had all along existed. Even now Zemindars cannot induce the ryots to accept any farm from which they are liable to be ejected at the will of the landlord. It is therefore simply misleading to divide the tenantry into occupancy ryots and tenants at-will, and this idea, imported from England, is at the root of all mischief regarding the landed interests of the country from which we

are suffering. Those who have landed interests in Bengal can be divided only into two classes. 1st. those who pay revenue to Government; and 2nd. those who pay revenue to the Zemindars. Those who pay revenue to the Zemindars are included under the common term of occupancy ryots. This misrepresentation has ruined Bengal and given rise to lacs of rent suits and several agrarian disturbances. There are three classes of landed proprietors who pay rent to the Zemindars. The first class comprises those who are gentlemen and do not hold the plough. They realise the rent from Mandals and cultivating ryots and make them over to the Zemindars after keeping a profit for themselves. The Second class comprises those who have tenants of their own and who at the same time cultivate lands, paying the rent either to the Zemindar or the class next to the Zemindars. These are the representative ryots of Sir George Campbell. The third class comprises

the cultivating ryots. Now Sir Richard Temple

and the British Indian Association only admit the

existence of the Zemindars and this last class,

ignoring altogether the existence of the intermediate

classes.

It would no doubt simplify matters and increase the revenue of the Zemindars, if the middle classes had not existed. But as a matter of fact they do exist, and no amount of writing or law-making can obliterate their existence. Some provision ought to be made for them or the law will not work. The landed wealth of Bengal can not be divided between Khodabux and so and so Bahadoor, and the Mookerjeas and Banerjeas, Ghoses and Boses left to starve. But the programme before us, if it means anything, means the death-blow of the middle classes. If such a misfortune ever happened in Bengal or India, if the middle classes of Bengal were thrown adrift to starve, having no means of subsistence before them, then there would be time for the nation to weep as it would lose its individuality complete ly which has been hitherto maintained in spite powerful and irresistible influences.

The following precis of the opinions of the officers consulted on the subject by Government ought to be generally known.

The conclusion of the Officiating Commissioner of Dacea is practically much the same, as he would deal with every case on its own merits, leaving the decision to two arbitrators, one appointed by each party, and a Deputy Collector as referee.

Mr. Schalch would maintain the principle of proportion as laid down by the High Court in the great rent case of Thakooranee Dassee, i. e., that the enhanced rent ought to bear the same proportion to the present value of the produce as the old rent bore to the former value; but he considers it essential that the cases should be tried by revenue courts.

The Commissioner of Chittagong would give the landlord one-fourth of the gross produce. But when the amount of that one-fourth has been once ascertained, he would fix the rent at that sum for 20 years without variation.

In the case of occupancy ryots the rent which would be paid by a tenant-at-will should first be ascertained : from this should be deducted the value of any improvements made by the ryot himself or his predecessor; and the balance should be equally divided between landlord and tenant. The question of landlord's improvements may beomitted from the calculation, as they are practically unknown: but where they exist, their value should be added to the landlord's share.

The British India Association desire to adopt the principle of the Oudh Rent Act, by which the rent of the occupancy ryot is fixed at a certain percentage below that of a tenantat-will, But they consider that an allowance of 122 per cent., which is given in Oudh, is too small a deduction, and they would fix the rent of the occupancy ryot at 25 per cent. below the competitive rate. They consider that the competitive rate is a fair indication of the share of the produce of the soil which the cultivating ryot usually receives, and that where it is low from any cause, the rent-

of the occupancy ryot, as a rnle, is also low. We will soon resume the subject.

THE NEW LEAVE RULES :- The new Leave Rules, affect us deeply in as much as they mean to burthen us with a charge of several lacs per annum. They are interesting to us in as much as they show that, though Government is always complaining of its poverty, it rarely lets slip an opportunity of dealing very liberally with the favored classes. It was in

LAND REVENUE IN BENGAL. -- We said in our

July, 1868, that the Furlough rules underwent a thorough change. Previous to that period, it was a misfortune to avail of the furlough rules and they served as a check upon the home-going proclivites of the European officers. They never got more than £500 per annum while on leave and had to leave their substantive appointments. For practically they were dismissed and on their return had to be provided for again. So an officer holding an excellent post had the chance of beginning his career anew. This was in itself sufficiently deterent in its effect, but there were other stringent provisions which entitled the officers to only two furloughs after 15 years' service. But in 1868 all these were

changed.

Under the new rules their maximum allowance was increased to one housand pounds per annum, the minimum allowance remaining the same, that is five hundred. They did not lose their substantive appointments, but reverted to their former posts, after the expiration of their leaves. There were other favorable provisions which entitled them to avail of two furloughs after eleven years' service, one after a service of seven years, another after four. Other provisions, extremely liberal, encouraged these men to avail themselves of these rules as often as they liked. For instance, previously it was absolutely necessary to perform a service of seven consecutive years before one was entitled to a furlough, but under the new rules, any man could avail of it on shewing a medical certificate.

The provision of allowing these absentee officers to retain their substantive appointments, brought to the surface another crop of injured civilians. These were the Juniors, who found that their promotion was stopped if the Seniors retained their appointments, and they also naturally began to clamour. It was necessary to stop their clamour too and they got liberal acting allowances, and thus reaped all the advantages of a promotion. It will be seen that these rules had the effect of burthening our revenues enormously. They were at first introduced for the benefit of the Senior Civilians at the cost of the tax-payer. But the Juniors wanted their share and it was necessary to satisfy them also. The pocket of the tax-payer was again touched to keep them in contentment. Here one may be disposed to ask the question, was India worse governed than it is now? Are the present class of Civilians a better class of men than the older? In what way have these rules been beneficial to those who are to pay and therefore the

party most interested?

But when one wrong is committed, another must be done to cover its evil consequences. When the Senior Civilians were benefitted, came the Juniors who had their share of the spoil. And when both these were satisfied the European uncove nanted servants began to complain. This time the Home Government shewed some spirit and did not undergo any risk to shew it. These officers could not exercise their influence over the State Secretary as they could over the Indian Government and the State Secretary found it more easy to disallow their claims for a liberal furlough provision. Probably he was alarmed too and did not know where the matter would end. As soon as one class was satisfied, another class came forward and he was devoutly wishing to beat a hasty retreat if that was possible. But the India Government again and again pressed the matter to the favorable consideration of the Home Government, and the Duke of Argyll was at last obliged to make a partial concession in favor of certain uncovenanted servants.

The matter however came to be decided in these ways. His grace ruled that the Uncovenanted Service should be reserved for the natives of the country and so furlough rules were not necessary for the offiers of that Service. But if there were such posts, which the natives were not fit to hold, and which it was therefore necessary to fill up by men indented from England, then alone such men should be admitted to the favorable rules. The Government of India again demurred and admitted that "nearly all the offices in the Uncovenanted Service are such as may, under certain circumstances, be fitly held by natives and that, consequently, if we were to adopt a principle of selection, which would be most in accordance with the instructions received by us, the logical conclusion would be that no members of the service should be admitted to the favorable rules." In short the directions of the late State Secretary were such that they availed tittle and practically bound the hands of the Government. They were permitted to admit only those to the favorable rules who filled posts which could not be "fitly held by natives". But the Government knew and admitted that, nearly all the offices under the Uncovenanted Service could be fitly held by natives, and so under the directions they could scarcely admit one to the favorable rules. The Government of India therefore prayed for less rigid rules for the benefit of those whom it undertook to befriend.

The Duke was then gone and Lord Salisbury ruled in his stead. His Lordship therefore in his despatch of the 10th February, 1876, gave the relief which was sought for. His Lordship concurred in the views of his predecessor that the uncovenanted service offices should be reserved for the natives of the country—services which they can fitly

hold. He admitted only those to the favorable rules (1) who were appointed in England and (2) who were appointed in India with the sanction of the State Secretary. The following officers were therefore immediately admitted to the more favorable Leave Rules :-

The 274 Officers, under the Government of India,

included in Section D.

The 30 Officers, under the Government of India, included in Sub sections 4 and 6 of Section E. The 20 Officers, under the Government of Madras, included in Sub-section 2 of Section B.

The 19 Officers, under the Government of Bombay, included in Sub-section 2 of Section C and four Forest officers in Sub-section 1 of the same Section.

The 10 Officers, employed in Mysore, included in Section 1.

The Educational Officers, the Officers of the Marine Department who have served in the Indian Navy or Bengal Marine, and the Medical Officers named in the lists transmitted by you.

The three Medical Officers of the Persian Telegraph Service, as rocommended in your Financial letter dated

the 26th February, 1875, No. 79.

Thus by one stroke of the pen about 400 European officers were admitted to the privileges of the heaven born. This was the third wrong com mitted to cover the evil consequences of the first. Do you know what this admission of about 400 officers to the privileges of furlough rules means? It is a trifle loss of good many lacs per annum to us! Yet Government always complains of poverty when pressed for money by the natives of the soil. The translators of the Judge' courts applied for some increase of pay, but Government had no money. The native Doctors who draw only about Rupees 25 per month, have applied for an increase of pay, but probably our Government will plead poverty in their case also.

But did the matter end here? The furlough rules inaugurated in 1868 still dragged their length along in their course of robbing the tax-payers of India. Though the Duke of Argyll specially instructed the India Government to admit only those to the more favorable rules who held posts which required technical education and could not be fitly held by natives, yet it appears, the Government of India sent a list of all the European officers in the Unconvenanted Service recommending the Home Government to admit all. This was acting quite in opposition to the principles laid down by the late State Secretary. But the present State Secretary,, Lord Salisbury, is very generous-especially when Europeans are concerned. We shall let Lord Salisbury speak for himself :--

A nominal list of all the above Officers is annexed to this

despatch.

14. Of the remaining Officers named in your lists, the greater part are filling posts which do not require preliminary technical education, and which, in future, if not held by Matives, will be occupied partly by Convenanted Civil Servants, or by Uncovenanted Servants specially selected, with the sanction of the Secretary of State, according to the principles adverted to in para. 11 of this despatch. Adopting therefore, with regard to this class of Officers, your suggestion that, as respects existing incumbents, an arbitrary limit must be, to some extent, applied to them, I sanction the extension of the more favorable rules to such of the above-mentioned Officers named in your lists as are now in the receipt of salaries of not less than Rs. 6,000 per annum, and I request that a list of the persons to whom this will apply may be forwarded for record in this office.

Every horest man must admit that the principle laid down by the Duke of Argyll was just. If we want men of special talents which we cannot supply from our own country we must purchase them at their own price. We also thank the India Government for its honest expression of opinion that "nearly all the offices in the Uncovenanted Service are such as may, under certain circumstances, be fitly held by natives." Under these circumstances either of the following courses was left to the Government. Either to give up the cause of the European Unconvenanted Servants, or to abondon the principle laid down by the Duke and sacrifice the over-burdened tax-payers of India for the benefit of few Europeans, who were not wanted in the country, and who had by the force of their color ever-ridden the just claims of the natives of the soil and supplanted them against the repeated injunctions of successive State Secretaries. The Government of India accepted the latter alternative without hesitation and Lord Salisbury was not only very glad to sanction all what the Government asked but suggested to it to make a further application for those officers who were omitted from the list by Lord Northbrook's Government; for in paragraph 15 of the same despatch we find the following from the pen of the State Secretary His Lordship says:

"I observe that your lists do not include any of the Officers employed in the higher appointments of the Andamans. You may perhaps desire to correct the omission, and possibly other similar omissions; if so, I will gladly consider any recommendations you may make." Was not the noble Lord in his most genial mood when he penned the above? Alas, he forgot that it was the dumb millions of India who had to pay for the exercise of his gene-

rous faculties!

What are ye about, ye native members of the Uncovenanted Service? And you too, European and Eurasian members, who draw a lesser salary than £600 per annum? Why should you be deprived of a share in this general spoil? The poorer Europeans have a better claim to the favorable rules than the richer, for this simple reason, that

the richer classes can pay for a Home trip while the poorer cannot. As regards native employes they have certainly no home to go to, but why should there be one leave rule for the stranger, and another for the native, when they perform the same sort of service? For instance Babu Kunjalal Banerjee will be subject to the ordinary leave rules, but a European, serving as a Small Cause Court Judge on a lesser pay, will be admitted at once to the liberal allowance. This seems to us some what unjust.

We have one consolation however. It is consoling that two successive Secretaries have directed the India Government to reserve the uncovenanted service exclusively for the natives. It is equally consoling that the India Government has admitted the fitness of natives for almost all employments under the same service. The most curious thing however is that, though the India Government submitted a complete list of Europeans Uncovenanted Service in India, and though the late State Secretary strictly enjoined to reserve their posts for the natives of the soil, and in which principle the present State Secretary had concurred, yet Lord Salisbury took no notice of the large list before him. He took no notice of the fact, that the India Government had systematically disobeyed his and his predecessors' orders to fill up the lower service by natives. Will the Government publish the list which it submitted to the Secretary of State? That list will be no doubt edifying.

SCRAPS AND COMMENTS.

The shareholders of the New York Times were paid last year a dividend of 100 per cent. upon the original price of the shares. At no time during the last fifteen years has the paper paid less than 80 per cent. The paper has been edited for several vears by Mr. Jennings who acted as editor of the Friend of India and Calcutta correspondent of the Times in 1864-65.

A contemporay says :--

"It is a curious fact, well known to medical men who have had experience with native armies, that when a man goes into hospital and says he will die, the result predicted generally follows. The invalid often seems to have the power of producing death by the mere exercise of volition, and it requires vigorous treatment to drag him out of the state of despondency which has much to do in bringing death about. A good story in connection with this matter reaches us from the Central Provinces. A young Irish doctor, new to the country, was in charge of the hospital attached to a native regiment, and he was much struck with the determination of some of his patients to die. One man would come into hospital with scarcely anything the matter with him, and say that he knew he was going to die, and die he would. Another man, with perhaps only a slight fever upon him, would tell the same story lugubriously, and die also. A number of men had persisted in dying in this unreasonable way, and the young doctor was puzzled and annoyed. While scratching his head over the subject, a strong-looking soldier presented himself before him. "Sahib," he said, "I am going to die." The doctor got up in a rage, shook his fist in the man's face, and cried, "Bedad, I'll court-martial you if you do." The man got frightened at the threat, and didn't die. The doctor was astonished at the effect of his vigorous protest, but resolved to watch the man out of hospital. The man was sent to another station, in which almost the first thing he did was to proceed to hospital and say he had come to die. His remark was taken as a matter of course—and he died. When the Irish doctor heard of this he said warmly that he knew the man might have been saved if he had only been threatened with a court-martial if he died, and lamented the stupidity of the people who had quietly let the fellow carres out his original intention of dying."

A crop of little difficulties is likely (says a writer in the World) to spring out of the Indian visit after the Prince of Wales's return, not the least of them arising from visionary expectations formed as to the result of petitions and grievances brought before His Royal Highness during his tour:-

"It is no secret that some of the presents, fabulous in their value, were given with an eye towards favours to come and already native princes have appointed agents in London to bring presure to bear upon the Government through the portals of Marlborough House. The Prince, with his wellknown tact, may safely be left to show these worthies the direct road to Downing street; but the disappointment that would thus be created in India might afford cause for regret that the presents taken out were not something like equivalent to the value of those received and might cause an unpleasant reaction from the impression produced by the Heir Apparent among native Indian Society."

The Lucknow Times says :--

"At a late sitting of the Select Committee of the House of Commons on silver Mr. R. W. Crawford said that no article of import from India now left a profit, and that no kind of goods sent out from England to India left a profit; and he further declared that this had been the rule for the last three or four years. This statement, says the home correspondent of the Bombay Gazette, has astounded outsiders, who cannot understand why merchants carry on business for three or four years at a loss all the time. Of course the failures of houses connected with India have been numer ous in consequence of such abnormal trade depression, but what most astonishes us is that so comparatively few mercantile failures occur in India, notwithstanding that on such undoubted authority as that of Mr. Crawford there is a never ending series of losses on Indian exports. To make matters worse, too, there appears to be no hope of any early improvement in mercantile affairs, and the result must be, sooner or latter, that production will be stayed, and the internal depression will be felt by thousands who have hitherto been but only partially, if at all, affected by the stagnation of both India's home and foreign trade. All this, taken in conjunction with the depreciated rupee, bodes ill for the country for at all events same time to come."

The Dell's Gazette has the following:-"It" is clear that our present Viceroy is not forget

ful of his father's maxims. If our memory do not deceive us, one of the works of the great novelist concludes with the following:-" The worst use you can put a man to, is to hang him." Such is evidently the present Lord Lytton's opinion, for the murdeter of Tajgunge, whose case we mentioned same time since, has obtained a reprieve at the eleventh hour. He was to have been hanged on the morning of the 4th May, when a telegram from Simla arrested the execution. The sentence of death had been confirmed by the High Court, and a petition to the local Government for a reprieve had proved unsuccessful. It is not at present known whether the sentence has been commuted for one of transportation for life."

The Home News says :-

"The condition of Russian feeling towards the insurrection has in it many elements of grave danger. The Slavoph party, who, of course, desire nothing more than the dismemberment of the Turkish empire, is daily gaining ground. The newspaper organ of the party the Mir, has long been bitterly inveighing against the Russian Government for assisting Austria in preserving Turkey. And it would seem that there is some pretext for the German charge that Russia is playing more or less of a double game in its relations with the Porte. Servia, it seems, has been directly informed by the Russian Government that, in the event of her going to war with Turkey, she shall be protected from Austrian coercion. How far the wish in the case is father to the thought it is difficult to say, but as these reports, in all cases emanate from a Slavophil source they should be received with considerable reserve. That the relations between Russia and Austria may became at any moment so strained, that rupture is inevitable, a conversation which Count Andrassy is said to have had with Khalil Bey, would seem to indicate. If, the Austrian Minister is alleged to have said, war broke out between Austria and Turkey, it would be necessary to make it á outrance, and to rectify the Austrian frontier, not only on the side of Asia, but especially the Black Sea, by the recovery of the Mussulman territories of those shores and the reformation of Poland. The prospect thus hinted at is not one in which Russia could acquiesce."

The same paper has the following:-"As was expected, the new religious difficulty has not been long to declare itself in Spain, and the civil war of Carlism, it would seem, is about to be succeeded by a theological war whose issues are not less formidable. The eleventh article of the new Constitution so far agreed to recognise the principle of religious liberty, as to lay down that, while the Roman Catholic religion is the religion of, and shall be exclusively maintained by, the State, and no public manifestations other than those of the Roman Catholic Church are to be made. "freedom of religious cultos shall be lawful." This the Pope has resented. We declare, writes His Holiness, "that this article, which pretends to be able to give freedom of worship in the country, violates every right of truth, and of the Catholic religion, annuls illegally the Concordat between the Holy See and the Spanish nation, lays the State open tot he charge of wrong-doing, and opens a door to error—error which is but a precursor of a long succession of ruinous ills to the nation, so long and true a lover of Catholic unity." It is not denied that the article in question is contrary to the Concordat of 1851, but it is argued by Senor Conovas del Castillo that the Concordat has been annulled for a considerable period. So strong, however, is the Ultramontane feeling in Spain, and so successful has been a Papal appeal, in the shape of a "letter to the ladies of Madrid," that Senor Canovas has been already compelled to give way, and to announce that Spain will revive the Concordat if the Article to which exception is now taken by the Vitican is accepted. The penalty with which the Pope threatened Senor Canovas for violation of the Concordat was the withdrawal of his Nuncio from Madrid, and it remains to be seen whether the Holy Father will be satisfied with the compromise."

In speaking of the successor of the Pattiala Raj the Pioneer says :--

The young Maharajah of Pattiala has been left so far "ithout a name in accordance with Sikh custom. For the est five or six years of life, a Sikh child is merely the baba, at best is distinguished from other baba log by some kname, afterwards dropped. Only when he is admitted into the church with much ceremony, and made a true Sikh by drinking some water that has been stirred with an iron knife, and eating certain mysterious patisserie of goor, and what not, is it thought worth while to record this event by naming him? So for the present the princely power and wealth of the late Maharajah are the property of a little personage whom his friends may be able in good time to identify as the right one, but would be puzzled how otherwise to describe. However, if he is so far destitute of what most people possess, he has at all events a good deal that most people are without, --- the ready money and jewels left him by his father amount to considerably over a million sterling. During the long minority before him, the accumulations of his revenue will more than double that sum, so that by the time the young Prince comes to the throne he will be very fairly well off .---

In a country like this, where fires are so disastrous and so frequent, any invention for preventing or extinguishing them, should be considered of importance, and can scarcely be too widely made known. The Statesman says:-

The New York Herald of the 1st March reports this, in the presence of General Shaler, members of the Fire Department, and gentlemen connected with the Board of Under writers, the Chamber of Commerce, and Insurance Companies generally, the Connelly fireextinguisher was exhibited in an open lot at the corner of Fifty-ninth-street and Eleventh-avenue. frame building had been erected, in which were placed - three cylindrical reservoirs filled with carbonic acid gas, and adjacent were eight other cylinders used as receivers. from which the gas escaped into the hose. An immense pile of barrels—two barrels deep and about five barrels high-the pile containing altogether 130 barrels of refuse resin, both ends of the barrels being open, stood at the east end of the lot. A smaller pile of boards with two barrels of refined oil on top, like the funeral pyre of Brutus, stood a little east of the resin, and to the westward was a tank four feet deep, built of brick and cemented, and having a surface area of 600 square feet, containing 375 gallons of crude petroleum, and into which sluice pipes emptied water. The tank full of oil and water was fired first, and a tremendous mass of flame and smoke arose, driving the crows right and left by the intense heat. In less than five seconds this great mass of flame as thick as four or

five ordinary brick houses, and three times as high, was extinguished by the stream of water expelled from the hose by the force of carbonic acid gas. The noise made was like that caused by a thunderstorm rushing through a mountain pass. Next, the 130 barrels of resin were fired, and were extinguished in less than six minutes, by a rapid stream ton times stronger than that which could be expelled by a steam-engine, from a nozzle of the same diameter; and, lastly, the funeral pyre was lighted, and, blazing as it did with great intensity, was extinguished in a few minutes. The experiments were in every way successful, and introduced a new agent of the most powerful kind for the saving of property.-Indian Statesman.

A novel experiment is about to be tried in the Isle of Man for the suppression of the vice of drunkenness :-

The House of Keys last week agreed to a new clause in the Licensing Bill, under which it is provided that any person found drunk on the public highway or licensed premises shall, on third or subsequent conviction within twelve months, be liable to a fine of forty shillings, and may be inhibited from purchasing intoxicating liquor from licensed persons for twelve months. Licensed persons acting in contravention of an order in writing, are liable to a penalty not exceeding £10. This regulation, if strictly carried into effect, will, no doubt, prove inconvenient to habitual drunkards' but, unless they are to bear some distinctive mark, such as a brand on the forehead, it will be difficult for publicans, with the best intentions, to feel certain when they serve strange customers that they are not infringing the law. Again, on the same principle, habitual gluttons who suffer from indigestion should be inhibited from purchasing food likely to disagree with them, and tradesmen should in like manner be forbidden to sell them, such diet. Much might be said in favour of some such legal enactment, for, besides reducing the number of deaths from apoplexy and other aliments, produced by living "not wisely but too well," it would prevent much social and domestic misery.

"Her Majesty the Queen has chosen to disappoint the

The Bombay Gazette boldly asserts:-

hopes of loyal subjects who believed that she would never be prevailed upon to give her assent to a Bill which had been proved to be hateful to every one but courtiers and place hunters. We are convinced that the proclamation of the Queen as Empress of India will be the heaviest blow struck at the institution of royalty in England since Her Majesty ascended the Throne. No English Minister, it may be confidently affirmed, would have givin the Queen the unpatriotic and fatal advice to separate herself from her people by assuming a title which they detest; but Mr. Disraeli no doubt exults over this debasement of the kingly title in England as the crowning act of a career in which he has stiven with all his might to fulfil the self-imposed mission of bringing into utter discredit Par!iamentary Government and Constitutional Monarchy. The mere fact that he is leader of the Conservative party and First Minister of the Crown shows how completely he has succeeded in educating his party to abondon the ancient ways of the Constitution and to follow him in his wayward course: while his example of political cynicism seems also to have demoralized his opponents. In the old days, the leader of the Opposition would have felt himself all the more bound for being a great noble to fight out this quarrel with the Court to the end; but Lord Hartington thinks this would be useless, and, by deserting Mr. Fawcett, plays into the hands of those extreme politicians--Radical or Republican-throughout the country, who exhort the people to put no faith in either Whig or Troy."

The Prince of Wales travelled from Bombay Poona; from Poona to Bombay; from Bombay to Baroda and back again; from Bombay to Colombo; from Colombo to Kandy and Nuwera-Eliya, among the hills, and back again to Colombo; from Colombo to Tuticorin; thence by Tinnevelly, Madura Trichinopoly, and Europe to Madras; from Madras to Calcutta; thence to Bankipore, Lucknow, Cawnpore, Ghazeeabad and Delhi; hence to Lahore and Wazeerabad, then the most northerly railway station in India; back again, by way of Lahore, Umritsur, and Puttialla's capital, to Agra; thence to Gwalior; thence to Agra, and on to Jeypore; back once more to Agra and on to the borders of the Terai; then to Allahabad and Khundwa; thence to Choral Chowkie, the furthest point ready for service on the Holkar State Railway; and back once more to Bombay. The length of sea and land traversed by the Prince in India and Ceylon must have been altogether about 8,000 miles, of which nearly 5,000 were performed by railway.

A correspondent of the Lucknow Times brings to the notice of the public a most wanton act of cruelty on the part of two young officers in cantonments, which calls for the notice of the higher authorities. He writes:-

"On the 28th instant, an unfortunate native proceeding to the cavalry lines, where he is employed as a punka coolie, followed his course by the public road which runs past the Sudder Bazar in front of the mess-house of Her Majesty's 65th Regiment. He had scarcely reached this point when a couple of young officers in a dog-cart drove through the gate of the said building, followed by a ferocious looking dog. They stepped the cart, and such an inhuman scene as occured it has never been, nor may it ever be, my lot to behold. They hissed their dog on the poor coolie, who shrieked and entreated for mercy; but in vain; these young men, officers and supposed to be gentlemen, seemed to enjoy their brutal sport, which lasted fully ten minutes, and by this time the dog had played havock with the bare legs of the unfortunate man who was quietly going to his work. After seeing the poor follow severely bitten, these brave and gallant soldiers hurried away from the scene of their victory leaving the humble and inoffensive labourer to cry over the pain and suffering inflicted upon him at the instance of British officers, and which will, probably, deprive him of his daily earnings until such time as he may be able to attend to work. These facts are notified in the Sudder Bazar Police Thanah, and it is to be hoped that their publicity in your valuable journal will be the means of attracting the attention of the Major General Commanding the Division, and that ample redress will be the result to the unfortunate man who has been the victim of the cowardly-assault."

Comments on the above are superfluous. Such

disgraceful conduct should meet with immediate and condign punishment.

THE BERARS.

(Calcutta Statesman,)

The profound hypocrisy of the pretences upon which we justify to ourselves our persistency in wrong-doing in India, receives a very fair illustration in a paragraph which appeared in yesterday's Englishman concerning the restoration of the Berars :-

"According to a contemporary, the proper way to rule the country in the fear of God' is to conciliate the Princes of India by handing over to native rule all the territory we ever acquired by doubtful means; and we are asked to make a beginning by restoring Berars to the Nizam. But whatever may be said about the strict morality of the proceedings which have given us the Empire of India, it seems to us that at this late hour of the day, we owe a duty to the people as well as the Princes of India; and if the retention of the Berars be in some degree unfair to the Nizam, the handing over to the Muhammadan Government of Haidrabad of multitudes of British subjects would be an injustice of the grossest kind. For generations and cultivators of the Berars have looked upon themselves as British subjects, and landed property in the Bears has attained its present value under the protection of British law and justice. We are asked by a professed philanthropist to rob the cultivators of all their rights and privileges under our law, and the land of most of its value, by making the Berars over to a native Government. Sir Salar Jung is an enlightened Minister, but he cannot make black white, nor prevent the Haidrabad cultivators from being oppressed by their Muhammadan rulers. When the Haidrabad ryot is placed on the same footing as his brother in the Berars, it will be time to think of a transfer of territory, but not till then."

In the first place, the writer is so tittle fitted for his task, that he has not the candour to state correctly what we have demanded. Is there no difference between our restoring to a Native Prince, territories that we admit belong to him, and that we confess to be administering only as a trust for the liquidation of a claim long since extinguished—and the "handing over to native rule all the territories we have ever acquired

in India by doubtful means ?" What are we to say of a writer who has so little respect for truth, so tittle regard for the honour of his country, and so little for the requirements of honesty, that he can reply in this way, to the simple demand that we should restore to the Nizam the territories which we took from him not very many years ago, as a security for the debt he owed us, which debt has long been liquidated. The debt itself was a scandalously fictitious claim; and now, although it was long since satisfied, we are still to keep back the property which we compelled the Prince to mortgage to us. The Englishman we are sorry for its name in this connection plainly does not know that we have not annexed the Berara, as the Nizam has persistently refused to alienate them, although we have used every means in our power of cajolery and threatening to make him do so. And now "the poor people," the poor people! How can we hand over "the poor people" to him? It is only charitable to suppose that the writer does not know what he is writing about. Over and over again, have we put forward this hypocritical pretence for justifying our coveting what does not belong to us. Every one, we should have thought, remembered that in the worst days of misrule in Oudh under the Nawabs, the emigration was always from our rule, that was such a blessing to the people, into poor, oppressed Oudh. Colonel Sleeman as an honest man warned the Government of Lord Dalhousie of this fact, and refused to be his instrument for the annexation. It was the same in Guzerat the other day, under the Gaekwar. The Land Revenue officers of Bombay were pointing out in 1871 that, though the Gaekwar's land assessments were three times the weight of our own, the people preferred his rule, and that the movement of the population was from our borders into his. And the very same disclosure had been made previously with reference to the emigration of our people from the Southern Mahratta Country into the Nizam's territory. Our self-love is so profound that we cannot believe it possible that our rule is anything but a blessing to the people. At this moment, they are emigrating from the Central Provinces into Gwalior, to escape the "blessings" of our rule.

The Englishman is heavily to blame for admitting such a paragraph into its columns. Observe the statement

"For generations the cultivators of the Berars have looked upon themselves as British subjects, and landed property in the Berars has attained its present value under the protection of British law and justice. We are asked by a professed philanthropist to rob the cultivators of all their rights and privileges under our law, and the land of most of its value, by making the Berars over to a native Government.

For generations! Why, we never set foot in the Berars until 20 years ago! Our contemporary should show a little more distrust of the gentlemen who favour him with leading articles, and who draw on their imagination for their

THE SHOWER OF FLESH.

(New York Herald, March 15.) One of the most singular and wonderful phenomena that have ever occurred in the modern world took place in Bath county, on Mudlick Creek, about seventeen miles east of this place, and a short distance from Gill's Sulpher Springs, and near the house of M. Crouch, about two o'clock on the afternoon of Friday last, March 3. A shower of flesh fell from a clear sky, covering a space of one acre wide and two acres long, with little of flesh from one inch to two inches wide, and from an inch to three inches long, and half to threefourths of an inch in thickness. From Friday till Monday evening the flesh still remained on the ground, and hogs and chickens picked it up and ate it. Hundreds of people visited the locality from Friday till yesterday, and were still going. Your correspondent talked with several reliable gentlemen who had seen a number of persons who had seen the strange sight, and hundreds of persons are willing to make affidavit to the above facts. The country for miles is filled with reports of this wonder. The people of the neighb urhood approached the flesh with a superstitious dread, the majority refusing to touch it. Mr. H. Gill, of Mudlick Springs secured a number of pieces for examination and chemical analysis, and, if possible, your correspondent will sem e a specimen and send it to Professor J. Lawrence Smith. I will endeavour to get all the facts and details, and write you again.

A SCIENTIFIC ANALYSIS OF THE SUPPOSED PLESH A SCIENTIST DECLARES IT TO BE DEAD FROG SPAWN. Dr. J. Lawrence Smith, scientist, to whom was given the specimens of flesh, has furnished the following report of his analysis :--

THE FOUR PIECES

furnished me by Captain Brent, of Mount Sterlingand Mr. Madden, of the Courier-Journal, were from oned half to one inch in size; they had the appearance of drie, gelatinous matter of irregular shape, and were more or less coloured. Filaments were attached to the exterior. Under a feeble magnifying power the edges were translucent; when heated in water the pieces became enlarged and more translucent. The dried pieces when cut across showed on the exterior a soft gelatinous substance without any fibrous structure.

· UNDER THE MICROSCOPE

the parts that had dried showed an irregular filamentons structure. The dried pieces, when placed in a flame burned readily with the strong and well-known smell of animal matter. The pieces were examined carefully under the microscope, but there was not the slightest indication of any muscular fiber or other structure belonging to what is commonly known as animal tissue. In mymind this matter gives every indication of being THE DEAU SPAWN

of the batrachian reptiles, doubtless that of the frog. They have been transported from the ponds and swampy grounds by currents of wind, and have ultimately fallen on

the spot where they were found. THE SPAWN THEORY EXPLODED.

A Bath county man, who gathered a bucketful of flesh, says the idea of its being spawn of batrachian or any other reptiles won't do, as their ova has no blood, traces of which were left visibly all over trees and fences. Dr. L. P. Yandell, Sr., of Louisville, remembers A PREVIOUS FALL

of flesh in 1841, at Lebanon, Tenn., and will give particulars as soon as possible.

THE ROYAL TITLE.

(Saturday Review.)

Mr. Disraeli is responsible for the security of the Queen's dominions throughout the world. He has to survey the course of things on the widest scale. He has to see distant dangers and to meet them. On rare and great occasions he has to take the nation into his confidence, to rouse it from a deceptive sense of security, and to call on it to join him in carrying out those great, prompt, and effective measures by which serious and imminent evil is to be averted. What does he now find? Russia on the borders of India, Tartary prostrate, unconquered Russia conquering the ancient savage conquerors of many generations, and all this under our modern system of railways and telegraphs. known to every one of our trembling native fellow-subjects. India is filled with terror, and with legitimate terror, for Russia, that hammer of Asiatics, is already knocking at her door. Most happily we have a way of setting everything right. We can keep Russia in her proper place; we can tranquililize the fluttering spirits of the Hindoos. It is in vain that Russia is triumphant, and that India is despondent. Russia and India little know our resources. In the face of the threatening legions of Russia, and the cowering millions of India, we can do something effective, masterly, overpowering. We can give a lady a new name. How true it is that the art of government are far simpler than the foolish world imagines! We have only to say "Empress," and Russia is checkmated and India happy. This is indeed pleasant, and it adds to our pleasure to think that the device is of almost universal application. There is China, for example. There are said to be four hundred millions of Chinese, and in China there is a general hatred of foreigners, and especially of Englishmen. If China could but collect its strength and dare to gratify its antipathies, its might make itself very disagreeable to us. The natives would know by railways and telegraphs what was impending, and Sir Strafford Northcote would discern "China" to be trembling on their lips. We could soon stop all that. We should at once begin to study names. We should discover that the Emperor of China was called the Child of the Sun and Lord of the Flowery Land. We could soon beat that. We should call the Queen the Daughter of the Solar System, which would at least give us the planets to the good, and Lady of the Botanical system generally, so that we should have the non-flowering plants to out credit. China would be scared, and the natives of India would be as proud of us as peacocks are of themselves. Very sanguine persons might even anticipate that "universal gravitation" and "cryptogams" would be seen trembling on native lips. Of course nothing great can be got without some risk. There is a chance of failure in the most statesmanlike schemes. It is not absolutely certain that our new and brilliant device will answer; and its failure, like most failures, might place us in a worse position than befere. The natives may notice that sounds do not stop cannon, and that a Russian bullet will have its billet whether the dusky sufferer who receives it calls with his dying lips on a Queen or an Empress. If the natives of India were like any other human beings, they might be expected to be thrown into a panic, rather than taken out of a panic, by Mr. Disraeli's statement. They would say to him, or rather murmur to him in their odd dumb way. We understood that Englishmen were not at all afraid of Russians, that they thought Russia rather weakened herself than strengthened herself by pushing forwards fast, and that to conquer Tartars was a very different thing from conquering Highlanders or Guardsmen. Now we find we were wrong, and that you yourselves are very much frightened; and when we expected that, if you said you were frightened, we should be told not. to fear, because you would and could fight hard, we are told to be easy because we may call the Queen by a new name. Alas! this does not produce the promised effect. We make a great effort. We actually get the word 'Empress' out of our lips, and still we are not happy. You do not seem the person to save us; but rather a remote shadowy, ineffectual sort of person, muddled in mind by corresponding with infants and poring over almanacs. This is bad for us and for you."

JONES'S TRAVELLING ALLOWANCE. A MORE OR LESS TRUE TALE.

(Bombay Gazette.)

Jones was a young man; scarce 22 indifferent years had passed over Jones's head, and he was in the Uncovenanted Service.

One never-to-be-forgotten month Jones's travelling

allowance was cut.

The Supreme Government refused to pay Rs. 3, as. 2, pie 1, on the ground that Jones's addition and multiplication were faulty, as exemplified in his demand for travelling allowance by rail. Now, Jones had spent hours with a railway guide and a pencil, and he had hoped he was not defrauding the population of India in this matter.

Jones remonstrated, and his remonstrance was unanswered. He then went to the financial offices of Government, and woke up three able Brahmin financiers. They yawned, and scratched their heads with their pens, which they routed out from behind their ears for that purpose.

Jones said-"You've cut me Rs. 3, as. 2, pie 1. Why have you done so ?" An able Brahmin financier replied, "You must write in

officially." Jones said-"I have written, and the valuable document is

in your possession." "Then you must write in officially, and say so," answered the still sleepy financier.

Ten years have now passed away, and the correspondence on the subject of Jones's travelling allowance has cost a large sum of money, but it is still as it was before.

Jones went again to the financial offices. There were three other financiers, who woke up and scratched their heads and vawned.

Jones said-"I want my travelling allowance-Rs. 3, as. 2, pie 1.

One financier said-"You must write in officially." Jones said-"I have done so. My first letter was sent in ten years ago."

Another financier remarked-"You must write in, and say so (officially)."

Twenty years have now gone, and Jones will soon be fiftyfive; and being an experinced and valuable officer, will have to retire. He has not yet got his travelling allowance but is full of hope.

He went again to the financial offices. A grey-headed but still able Brahmin financier stopped his financings with a final snort, when Jones came in, yawned and scratched his

Jones said---"I want my travelling allowance---Rs. 3, as. 2, pie 1."

"You must write in officially," was the answer; with which Jones was becoming familiar.

"For thirty years I have been writing in officially," said Jones, "and I am almost becoming impatient."

'I think your name must be 'Jones' said the financier. "I remember seeing some document referring to your allowance."

"So do I," answered the now excited Jones. "I can remem. ber some few cartloads of documents on that subject." "It has gone on to the Government of India," yawned a

Brahminical but able financier from a corner. "When will it come back?" asked Jones.

"We can't say, sir, but it usually takes about the same time to come back as it does to go."

Jones went to his home, and resigned. He made a present of the money to the population of India.

Jones is now dead. An official letter has come to the Bombay 'Government, sanctioning the "disbursement" of Rs. 3, as. 2, pie 1, on account of travelling allowance due to Mr. Jones, of the Bombay U. C. S.

As Mr. Jones retired twenty years ago, and is no longer living, it cannot be paid to him.

A correspondence is therefore going on as to what is to be done with the money.

In twenty years more it may be settled.

THE POLICE AND THE WORKING OF THE CONTAGIOUS DISEASES ACT.

(The Indian Mirror) A most scandalous case of Police oppression has just been engaging the attention of the Deputy Commissioner and the Magistrate of the Southern Division. It was a case which was prose cuted under the Contagious Diseases' Act, the prosecutors being a Mahomedan Inspector and a Jamadar and the defendants, two helpless females, one of them being a married woman, and the other being under the sole protection of one person. On the night of Monday last, the prosecutors entered the defendants' house by force, and ruthlessly dragged them out, saying that they had carried on the business of common prostitutes without having first registered themselves. It may here be worthy of remark that the house in which these women were arrested, is not a registered brothel, as was admitted by the Inspector before the Magistrate, though before the Deputy Commissioner the Inspector deliberately and falsely stated that the house was a registered brothel. When arrested, the helpless women, with tears rolling down their cheeks, said that they were respectable persons that they never practised such a filthy and abominable profession, and that they would sooner sacrifice their lives than be common prostitutes. Their tears, their cries, their protestations, though capable of melting any heart, however hard, were of no avail in this intance; and they were triumphantly hurried away to the local Thanah. Here their miseries commenced. Arrested at about 8 P. M., they were detained till after midnight, when they were released on Thanah bail. What took place during this unnecessary long interval, what influence was brought to bear on the unfortunate women to induce them to confess, what threats of bodily injury were held out, it may, perhaps, not be safe to mention, as none but the victims themselves can tell their own tale, their friends and relatives not being allowed to accompany them inside the Thanah. But fortunately the cruel force, as subsquently enacted, of extorting a confession, was witnessed at the Police compound by several respectable persons, who signed a written complaint, and handed it to the defendants' Pleader for presentation to the Deputy Commissioners. Though released on Thanah bail at midnight to make their appearance the following day at 10 o'clock, they were brought to the Thanah in the early morning, and, after being detained there till midday they were brought to the Police compound. The oracles were worked in an open room in which the Inspector has a small office, the spokesman being the wellknown Jamadar appointed under Act XIV. of 1868. Entering this room, the defendant's Pleader asked the Inspector to be allowed to have an interview with the women, but the request was flatly refused, the Inspector stating that the women had admitted having practised the profession of common prostitutes, and were willing to register themselves, and that if an interview were now granted, they would perhaps change their minds. In the meantime, four men, who had witnessed what had taken place, wrote out and signed a complaint against the Jamadar for presentation to the Deputy Commissioner. The complaint ran as follows: "The Jamadar under Act XIV, said to the two women in order to extort a confession of being common prostitutes, and to get them to register themselves: You had better confess and write your names. If you don't I'll send you to the Alipur Jail. There you will get a severe flogging with the cane. Write your names, and nothing will happen to you, but you will be released at once. If you don't confess and register yourselves, rest assured that if I don't put you under the Act, I will not keep this beard." The names of those who sign the above complaint are as follows, and we produce them for obvious reasons: Bisto Churn Mozumdar, Miah Jan, Mohurrum, and Aizimuddin Bariwala. The last person, under his own signature, makes another complaint, which is as follows. "The Jamadar also told me : You had better

say that these women are prostitutes, If you don't say,

and if this case is dismissed, I will put you into trouble." The above two complaints were put into the Pleader's hand for presentation to the Deputy Commissioner. Now comes the most important part of the whole business. Brought before the Deputy Commissioner, the two women are formally informed of the charge brought against them. They say (to the utter surprise of the Pleader and their sorrowing relatives). "Yes, huzur, we are common prostitutes. We have been practising this profession for some time.'

The Deputy Commissioner .--- Do you wish to reger yours

selves ?

The women .--- "Yes huzur. The Pleader looked astounded, as any lawyer would have looked; and a triumphant smile played upon the face of the Inspector. In the meantime, the Deputy Commissioner recorded the admission of the women, and ordered them to be registered.

The Pleader .--- I am instructed, Sir, to appear for these women, and to bring certain facts to your notice. I sure you will give me a hearing.

The Deputy (after a pause) .-- But these women don't recognise you. They don't know whether you are their Pleader. Besides, they have admitted their offence, and wish to be registered.

The Pleader .- True, they don't know me. And what is the reason? The Inspector refused to allow me to have an interview with them. I have been engaged by their relatives. The Police have acted in a most arbitrary and oppressive way in this matter. They have obtained the women's confession of the crime and their consent to register themselves, by means of coercion and threats of injury. This is a course of proceeding which no man could for a moment countenance. I hold in my hand a complaint signed by four respectable persons as to the doings of the Jamadar. Will you allow me to read ?

The Deputy.—I will take no notice of the complaint. I can't allow you to read it. The women have cofessed their guilt before me, and they consent to register themselves.

The Pleader.-I submit Sir, that the confession is made through fear. My instructions are that case may be sent up before a Magistrate.

The Deputy. -I am always lenient with women of this class. When they are cought plying their trade without having first registered themselves, I never send them up before a Magistrate, if they agree to register themselves. If you wish, I'll send them up before a Magistrate.

The Pleader: -Yes, Sir. That's most desirable. But as the confession made before you is sure to be put in evidence, I think it my duty to request you to ask these women whether the confession is made of their own free will and pleasure, or whether any coercion or threat of injury has been used.

The Deputy:-Very Well, I'll put the question. The question was clearly put to them, and they replied as clearly that the confession was exorted out of them. They emphatically denied having ever been prostitutes, and they said that they would sooner give up their lives than be prostitutes. Before the Deputy_ Commissioner they made the confession through fear, as the Jamadar had threatened them, and here they related the threats.

The Jamadar stood aghast.

The Deputy Commissioner, after a long pause, ordered the Inspector to make further inquiries into the matter, and to bring up the women the following day.

The pleader informed the Court that the Inspector had detained the women in the Thanah most unnecessarily, although they were on bail. They were brought early in the morning, and kept till this hour, and no food was allowed to be given them. The Pleader hoped that this would not occur again, but that the women would

be released without any delay, as the surety was present. On Wednesday morning the Inspector again brought up the women before the Duputy Commissioner and saidthat he had got a Native who had given medicine to one of the women for a contagious disease.

The Deputy (to Pleader)-I think it best that the case should be sent up before a Magistrate, as it is very desirable that the matter should be fully inquired into.

The Pleader :- That's just what we want. The case was accordingly sent up. The women denad the charge. The Inspector went into the box, and said that he prosecuted on information. Three witnesses were brought for the prosecution, and their evidence was so unsatisfactory that the Magistrate dismissed the case without calling on the defence to enter into their case. The witnesses turned out to be sailors' dalals, having no better occupation, and they could not explain how the Police managed to get them as witnesses, though they visited the women, as they alleged, once or twice only, and lived far away. In the meantime, the doctor who gave the medieine, evidently after hearing the cross-examination of the Inspector, was non est. The Magistrate remarked that this was an entirely trumped up case, and that it had never before been his lot to try a case in which the evidence was so unsatisfactory.

The Pleader for the defence observed that he regretted very much that the case had been dismissed at that stage as that debarred him from making some remarks which he intended making, and which would show the conduct of

the prosecutors towards these unfortunate-women. The denoument of this sad and disgraceful affair now remains to be told. After the case was dismissed, the witnesses whom the Inspector had cited, seized the women in the Police compound, and after assulting them ran way, thus showing the feeling with which the present prosecutiou was got up.

ACKNOWLEDGEMENTS.

SUBSCRIBERS.

Rs. As. P Secretarya Reading Room. Darampaory Salem 1 Prabhushanker Makanji Esqr., Dhrangadra, Kattywar. K. Varaha Charry: Chedumbrum. 5 0 0 Ramchundra J. V. Esqr., Broach ... 0 8 0 M. S. Mootoosawmy Naidu Esqr., Tripotore. 5 0 0 5 0 0 Narayn Dhondoba Diwadkar Esqr., Bombay. Secretary G. N. Library, Sanglee, Deccan. 0 0 Rajessary Hurry Dass Veharidass, Esqr., Karbary, 0 0 Wadhawan. H. H. Thakur Saheb Daji Raj Esqr. Wadhawan Rajcote. His Highness the Heir Apparent Bahadoor Khanji Joonagur in Kattywar 5 0 0 Gopal Dass Engineer Class, T. C. E. College Roorkee.

Ambaram Kevalram Esqr., Secry. Bhooleshwar 2 8 0 Library 5 0 0

Printed and published by C. N. Roy No. 2, Ananda Chatterjee's Lane, Bagbazar, Calcutta.

मगरन हिना।

श्रुष्णमाना। बीयुक भिवनार्थ छि। हार्चा, भाक्षी, ध्यम, ध, ध्येगीछ। निर्वनाथ वांत्र वाङ्गालात धक जन लक्ष चिष्ठ कि व। " श्रूष्ट्रामालाग्न" (य कि विज धिलि मिन्न इहेशाइ जा हा जैहात लिथनीत छे श्र कर रहेशाट्य।

निमर्ग स्मूत्री, बीगात्रमा थमाम उद्घेष्टा अनी छ। प्रथानि को वा। शमा छिलि मन्म इय नाइ।

ङात्र कि नि, बी न तिया इन तात श्रीक। ध्राप-वि उ शक्त । इं । जागारक त् ज्ञन शवर्व (जनारबल विश्वाद्यत छ । ज्ञादा जिथिक इहेश । यू बत ए जत अप का वार्गमत्नार्थल का वार्मित करा जन क्षांन किव किविक लिथिया ठाँ शिक्ष कि मखायन कर्त्रम। उँ। इन-দের দৃষ্টান্তে যুবরাজ সম্বন্ধীয় কবিতার ত্রোতে দেশ क्ष'विज इहेल। यू ज़ारज द ऐप्पर्भ य मि कविजा लिथिज मा इइंड, जोशे इइटल मखर डः आंभरी "जार्ड लिहेन" कांग (म थए अभिकाम न।। (कन न। "जाद्रा (मर्या) कि " ভারতে নর্থব ক " কাবা আগমরা দেখি নাই। ''ভারত ভিক্ষ.'' প্রভৃতি কাব্য সময় মত কতকটা আব-भाक इडेश इल। किन्छ 'ভারতে लिটेग' कार्यात कान श्राक्षित्र जो । जा भद्रा (मिथिए भारे (कि ना।

असोविश्मिकि कव न्याकि, बीक्ट्रभावीस्याइन तात्र চৌधू त कर्क् व्यक्तानि । 'या र्ख व्यवत' त्रधूनमन ভট্ট চোর্যোর সংক্ষলিত স্মৃতির মূল ও অনুবাদ এই পুস্তকে मन्नितिषिठ इहेश। थएए२ ध्वकां क हहेर । ध्वकां नक প্রতিজ্ঞ করিতেছেন যে তিনি ক্রমে হিন্দু শাল্তের অক্যাক্ত बामना क त य डिनि এই মহ छ উদ্দেশ্য সাধনে কৃতকার্যা इडेन।

शरक छ जिंधान। बीज्र्याह्य श्रेष्ठ श्रिका निज। व्यामादम व विद्वारा अ व्याज्यां य थानि विख्य व व व व व व व्यागित। इंश्र मृला ७ जाला।

विख्वः शन।

(वांश विद्यास वावाः।

यू ला উজीव পুত চ इर्थ शर्म। গুতি আট পৌজ ফরমার छोकाकत हो । वस (पव ৫८ नः इपि एथाला। ৫ न १ (लां ज्वां जां त तं ज्वां जी।

NOTICE.

Wanted a situation in Town as Khachanchee on deposit of security money, by a respectable native gentleman of varied experience and good character. Please address to A. B. care of the Printer.

गवर्गरान्देत जारान्थं।

जिथुं वि गां जिए दे वे ति दक वेम मार्घ व कृतां जांका गइ-कूमात जाद लाल इहिनन। कुष्ठ भार महिन मार्ड्य १ ड्छात्र दिमात्र श्रंड्ग कित्र्गर्ह् ।

निस्माक (लालिम ज्राबिएकेएके गालिब भाम छेन्न उ इहेन।

छोक मार्ड्य এवर हिनिम मार्ड्य প्रथम (व्यगीत, भाषिम मार्थि छेहेक। । मार्थि, यिष्ठत विखेम अवश वाश्वत मार्ट्य विजीश स्थानीत, वाश्व जगमीन नाथ वाश व्याविम मार्डित, (न् श्रांत्र मार्डित এवर व्यानील मार्डित उठीय (खागीत, (खानश्म मार्ट्य, (जमम मार्ट्य, विवि म'द्दिन, श्राविम माद्दिन, (कृत्वि माद्दिन हर्ज्य (अभीव लि। हि.म स्र भित्रिए एए इंस्लिन।

वातू छिलान नाथ (घ व विजी । जा जा जा भिर्वा । प्रान-नीश्र (जनात मधा जाते न मङ्क्यात मृन् मिक इइ-

टलन।

वातू इति श्रमाम माम प्रिजीश जा छ। शर्या छ (य म-तीश्रद्भव भवर्षण मङ्क्रमात्र युक्तमण शर्म नियुक्त इहे-स्मर्ग।

वातु अधिनो क्यांत छ र - उर्क्र मः न (जनांत्र विस्वर् त युनम् कित शिष् नियुक इइ लिन।

मर्वाम

— टिम्लाल मार्ट्य अशा शर्या हैक जां क काल जांड कम (मर्ग यांग । अई जी (पात ममग्र मकलई जाहिश मध् स्मन क्रि: তছে, किन्छ ल्लिश् हैना के श्वर्ग क्रिन्श याज। कित्रिया मङकि श्रित यूतिया (तिष् विटिह्न। मज्त जिनि मां बिजिल्लिश शंगन कि ति दिन ।

— जिनाक्षः तत जा उर्ग ज भागक ज्रांत का क क्रिश क्री कार्ति कार्तिका करेश है। ध क्रिश किर कथन (मर्थ नाई। इंड्। उनाउँ। उ वमनु जर्भका जगानक। शीष्टिं वाकित एक तक वर्ग इहेता छै। विवर (वांध इश (यन छेड्रा छूटिंग वांडित इडेल, मांशा कँ १ शिए । था कि, वभन इहेश भारी दिवस करि जशानक इक्ति क (त्र, कथन २ सूथ मिश्र। शां जला वाहित इश ७वर যেন কিছু ধরিবার নিমিত্ত ছাত ছুটিতে থাকে। প্রায় वक घणीत मर्था (त्रांशी शंक्षत्र शांक्ष इत्र।

一পাঠक शर्भत यावन आर्ड (य, প্রায় তিন বৎসর इहेल छा। ज नां मक धक जन हिनवां मी ध्यात्न आहिता। हेर् ब छोत्र लखा मनूषा थात्र (पथा यात्र ना। किन्छ जात्र धक জन हिनवामीटक मन्म जि भाउया शियाटहा ध वाङिक ठाकि वार्षक अल्या। इंश्र देम यां वा व किंद्रे ० इस्र धवर जाव १८५ (मत्। हाम जारभक्षा ध वाष्ट्रां इक्ष लग्ना वक जन इंद्रानी वामी इंद्रां क প্রদর্শন করিয়া লইয়া বেড়াইভে:ছন। এ ব্যক্তির শরীরও যেমন আহারও তেমনি। প্রায় আদ মোন চাউলের ভাত সে অনায়াদে ভক্ষণ করিতে পারে।

लেत मिथि शिलिय़ां (क:ला। कः,यक जन जांकांत्र वक-ত্রিত হইয়া উহার উদর কর্ত্তন করিয়া সিপিটি বাহির कतिश्रार्ज्ञ।

— मित्रिक्ष अनुसारक (य कंड क्रिश क्करम्ब थ्रवर्ड करत जोश्र बेश छ। नाई। किছू मिन इड्न क्वान स्म थक वां कि थक है जश्मक नृभाश्म कार्या कर्ब। जार्या जिन्ही मन्त्रान इश्न, किन्छ जाङ्गिमिश्वरक तम जन्न (भाषन क बिटा शास्त्र न। अक पिन मिन किनियो मिन्न प्रार्क अकिंग नि जीदि लहेश शिया जल मस्या जाहा मिग्रिक निःदक्ष कदत्र धवर जा कात्र जल मद्य कहेत्र। खान जाश कर्ता (म गिष्ण) मिशा প্রকাশ করিয়া দেয় (य, এक দল योजां अशं-ना जां होत मन्त्रों कृति (मत्र। इंडि गर्था छेश्। एत्र म, ड (मह ड्यांशिया) क्रान लार्शं भार जासूनक किर्डिश वाहित इहेता शर्फ (य, जाश्रापत शिज। कर्ज् क जाश्रा इंज इहेशाएए। হত্যাকারী যাবজ্জীৰন কারাগারে নিঃক্ষিপ্ত হইয়াছে। মুদলমানদের মৃত্যু সংখ্যা ইউরোপীয়ানদের অপেকা

লালোনিকা নামক স্থানে তুকক্ষ ও মুদলমানদের। কিছু কম। गर्भा ख्यांनक युक्त कहें या शियार्छ। এक जन योक —शृत्व এ मिनीय हे छत (खनीत स्नारक हेश्य ज-यू जो यूमनगान धर्म जारमम् करता भ्योतिहा निर्शक (निर्जात जोत जोत जिल्ल कर्त्र जा अक्र क्या णाशीत ऐकांत कतियात एछ कतांत वह काल युक्त (नत ए जि करण नाह, ज्यान भाशिल देश्ताफान अधि আরম্ভ হর। ফারাদী এবং জারম্যান রাজ দূত তুরুজ্ম- ইহারা অভ্যাচার করিতেও ত্র টি করে না। গত শুক্র-पिरिशंत्र कर्ख क इंड इइंशार्छ। जुकक श्वर्गायण यिन च्छाकातीमिश्व छेशयुक्त भाष्डि छामान ना करत्रन, शिष्ठिता ছिल्लन। इंहोत्र स्वाभी कार्यायुर्तार्थ भाषार्थ তাহা হইলে তুৰুত্ব রাজ্য ভার খার ষাইবে। কর্ম স্থানে অবস্থিত করিতেন। বাটাতে এক জন

- जाशान शवर्षण जाज काल मकल विवर्शत छेन्न जि मामी छ এक जन मिनी श्र थानमामा थाकिछ। यम করিতেছেন। আসামে যে রুফার্ণ চা প্রস্তুত হইয়া সাহেব রাত্তি শর্ন করিয়া আছেন ইতি মধ্যে খানসামা थारक छेश जाजि छेश्क्रको। कि क्राप्त ज्ञानान अञ्चल कित्र इस देश भिका मिनात निर्मात निर्मात विभिन्न वात्र जन जाभानवानी युवकरक जाभान शवर्यप्रे व प्राप्त (अंतर्ग कितिटिङ्ग। इंश्ता मञ्त जात्रजार्य जागमन क ब्रिट्र

— এ দেশীয় রাজাগণ যুগরাজকে যে বিপুল অর্থ উপর্চো-कन अज़ थे व्यमान कर्त्रन जाहा ताथ इग्न विकृत्न याहित ना। लर्फ लिंग्डेन यून तार्षित्र मिष्ठ श्री (पथा कर्त्रन। युनद्राक उँ। शिक्षि विस्थिष क्रिया क्रिया क्रिया याशाटक इंश्टब्रक ब्रांक कर्माग्रीशन (मनोग्न ब्रांक्रांटमब्र मिंड कान क्रो जान प्रावा राज ना कर । न जा हा ब खि दिवन जिनि विदल्पंच मदनादयां श अनान कदत्रन। यन

প্রকৃতই যুবরাজ আমাদের হূতন গাবর্ণর জেনারেলকে এই রূপ উপদেশ দিয়া থাকেন, তাহা হইলে ভাহার थ দেশ আগমনে যে একটা বিশেষ উপকার হইয়াছে তাহা অবশা স্বীকার করিতে হইবে।

-- भ मो। न भिमन बी मि: शंत अधामांत ७ यञ्च (मिशिल शक्त विकारत छेनत इत। हिन त्रांद्या इंश्ता थड करो, এত गंभान महा क्रिटिह्न, ध्रमन कि इंश्राम्ब জीवन পर्या छ मङ्गोशन्न, जशाह इश्वा श्रा धर्म क्षात्र क्रि: ७ ज हो कर्त्रम मार्ट। इंश्राप्त यञ्च क्रक मक्त इहेशांट्य। हिन्हेमिन नांभक छात्न ब्राल्य जात्नक छालि हिन श रहे धर्म जावल स्वन क तिशा एक।

— किছ मिन इहेल भित्र जाशिरात्र निक्छे अक थानि (ब्ल ७: य नक है छ न है। इस शिष्या याइवात छे शक्य इहेश ছिल। हेश्रां विख्य लाभक हिल धर यान (कान इय हैना इइंड डाइ। इइंटल इंश्एित वाधकार्भ य इंड अवाइंड इंडेड डाइांत जात मत्म इ नाइ। षाञ्च मक्षांत्व जावा शिशार्ड (य, (त्रल दाखांत डेशत जक श्रानि हर ए छा उर अपनि (कर्नाह्र) कोन वाङ्कि कर्ज् क इन्छि इस । ऐशे वाधिया (दल नकटि अ क्रिश याँ कि लोश (य, जारन क कि इच हैन। जा कि किन য়াছিলেন।

— अत वाक नाम गम, देखन शिक्षम ज्ञा मृजा मश्था करम इकि इहे छ छ। शंज वर्मत मार्ज मारम व गक्षात ३१,०० छन (चाक छान छोन कर्ता वर् वरमा माष्ठ मारम ७४४४२ (लारकित मृजा इडेग्नार्ड् । खु: तरे गिशकां १ मा का मा वा वम छ छ जना छेठा यु विखत्र (लाक প्रांव जाका करत्र।

— (वाश्वाहेरग्रत स्वाश्वा मश्का ख बिर्पार्ध वाश्वित शहर-য়াছে। ইছাতে কতক গুলি কোতুকজনক বিষয় লিখিত इइंशार्छ। (वाश्वः) वाकानितात मृजा मश्थाः जाि क्य। इंश्री ७७ প्रिक्ष्त প्रिष्ट्र थार्कन ना, তবু ইহাদের সহজের মধ্যে ২০ জন মাত্র মৃত্যু প্রাপে পতিত হন। বোদ্বাইয়ের ফিরিন্সিরা তত বলবান জाতि नश, किछ इंश्रापत मृजा मश्था जार्शकांक्र ज क्य। इंकाद्वत यक्षा २५ जन किविक्ति यजा হয়। ফিরিজির পর পাদিদের মৃত্যু সংখ্যা কম। প্রতোক হাজারে ২৪ জন পার্সির মৃত্যু হয়। ভার-जवार्षत मधा इडेदबाशी स्वापत जाय शहिकात, शहिक्छन ও স্বাস্থা-নিয়ম-পালক জাতি ভারতবর্ষের মধ্যে আর (कान जाडि नाई। किछ (वाश्वाई त्य इश्दान य यूज इंछे त्राभी रयत माध्य ३२ छान माना ली ला मश्वत न करतन।

वादत थिनिद्रशूद्रद धकडी यूवजी (मम जाउ। स विश्वा ভাষার শায়ন গৃহে উপস্থিত হুইয়া ভাষার প্রতি অত্যাচার আরম্ভ করে। চাকরাণী ইহা জান্তি পারিয়া চীৎকার করিয়া উঠে এবং কিছু ক্ষণ চীৎকা-(রর পর প্রতিবেশীগণ উপত্তি হয়। লোঁ:কর সম:-शंग (मिश्रा) थानमामा (यम माट्यतक छाड़िया (मेरा এवर পলায়ন করিবার চেন্ডা করে কিন্তু সে প্লড হইয়া श्लिশের হত্তে অপিত হয়। আলিপ্রের মাজিছে-(छेत निक छे डेड्१८क (माशम क्रा इडेमाएइ।

-- गथा ভারতবর্ষে যেরণ বনা জন্তর প্রাত্তীব ভার-তবর্ষের অতি কম স্থানে এত জন্ত দেখা যায়। বাহাতে এখান इइ তে हिश्ख शश कूल निमूल इस, शवर्ग अइ निभिन्न विद्याय यज्योल जाएक्न। वर्मद्र यज बना

इया।

জক্ত হত হয় তাহার একটা ভালিক৷ প্রকাশিত হয় धवर জन्छ হত্যাকারীগণকে কি পরিমাণ পুরস্কার দেওয়া इश जो हो अ लिथि उ इहेश। थोरक। अपना थं व जारम ब প্রথম ছয় মামে ১২৭লি ব্যান্ত, ০৭০ চিতা ও রুফ ব্যান্ত, ১৭৮ ভল্ল, ৯১ নেকড়িয়া, এবং ১৭৭ হায়েনা বাঘ হত इत्र। श्वर्दिर्धेत ५८१३ छोका वाग्र भट्ड। विजीय छ्य मारम १३ वार्ष, ३५४ हिंछ। ও क्रख वार्ष्य, २१ जम, क, ৫१ (नक ड़िश्), ৯৪ ছায়েনা, এত ছিব ১৮২টী অহাত ज्ञारनाशांत्र, এवर ५८% जी मर्श विनक्षे इस्। श्वर्णपाण्डेत इंश्रांख ४००५ छोक। बाग्न शर्फ। छेक वर्मात्वत्र भिष छ्य मारम वार्ष कर्ज्क ०० छान मनूषा धवर ३७१२ छी (शां, हाशं, इंडार्गि, रिंडा अ क्रिय गांख कर्छ्क २० जन मनूषा ७ ৯०৯ ही तथा ছाथ हेजा मि, जल कर्क् क अन मनूषा ७ ३० छी (भा ছाभ हेजामि, त्नक छिय़। कर्त् ७ जन मनूषा, ७२०२ ही (११) इंशि, इंदिशनों कर्ज् क १७৮ ही (भा भाष्ठ, जागांग जन्ड कर्न् क ०० जन मन्या ७ १०२ हि (११) हार्श, धवर मर्श कर्ज, क 8 २१ जन मनूषा उ 80२ हि শেষ ছয় মাদে वग्र জन्छ ও বিষাক্ত সর্প কর্ত্ক মোট ७१९ जन मनूया उ ०००७ जी (गी ছार्ग देजानि विनक्षे

—गालाटिक এक क्रश हिक्स शीए वि श्रिक्त थोइडीन इहे-शिष्ट्र। जातिक इश कर्ज् क जाका छ इहेट जर्ह प्रवर (त्रांभी डेशिश्व इहेट्डिश

- এখন যে সমুদায় কাগজ ছাপাইতে হয় তাহা ना ভिजारेश। लहेल हां भा छेट न।। किछ का गंज ভিজ।हेश। लउग्रांट थकरे का जि हा। एक का शंज यেत्रश शतिक्रांत अ ममान शांक जिजारेल छेश मा क्रिशारक ना। लखरनं श्रीमिक म्भानिष्टि पण रख ना जिजादेश मूजाक्षण कर्ता यादे जिला भाषित्व। भज्जत्र इंग्गा श्रीतकात करियात आत अक्षी ऋविधा आविक् उ इ इल।

— খाই गांत्र शारमत निक छ आ कि छिम नामक अक काठीत्र शर्वा वर्गभी काष्ट्र। ऐश्वा देश्तक त्रांका তাপিয়া অত্যন্ত অত্যাচার করিতে ছিল। তাহা-मिशारक भागन कर्तिवात निभिष्ठ कडक श्रमि ३९८त्रष रेमछ थाइतात পारमत्र निक्छे थ्रिति इदेशाएइ। किছू দিन इहेल हेश फिशंदक निर्मान। क्रिय़ा अक्षी कामान ছোড়। इয়। কিন্ত ছর্ভাগ্য ক্রমে কামান ফাটিয় তিন जन इश्द्रिक रेमना इक इस जवश लंज भन इंडा (मिथिया। श्रा अ निजा कतिएज २ हिलियां यांत्र।

—আমেরিকার মহাসভায় একটা ভূতন আইনের भाण लिभि छेशिष्ड इइंशाइ। इइांत छ क्यां महिय त्रका कता। जारमितिकां श जारनक भिकाती जारह। ভাহারা অনর্থক বিশুর মহিষ বধ করে। এমন কি এक वाजि अज जारमानार्थ जिन मारम २৮ श्राजात इंडाकि। अने इंग्न वहें व्याहेनिती (मई ऐक्तिणा श्रेखंड इंहे-তেছে। আইনে এই রূপ ধারা থাকিবে যে, কেছ বন্য ञ्जी-महिष হত।। করিতে পারিবেন না এবং নিদি छ मः श्री श्रीक्य-महिर्यत्र णिधिक यमि (कर वध कर्त्रन जिनि मखनीय इहेरवन। ध्रे छेख्य विध जाश्वार्धित मर्ख्य পরিমাণ ২০০ টাকা জরিমানা কিয়া এক মাস মেয়াদ। याश्रां एक जिल्ला द्या इजा ना इय जक्ष जक्षी जाईन कत्रां ७ विद्धम्।

-- পাওনিয়ার বলেন যে, মহারাণী বিকটরিয়া ভারতে-भन्नी' छेशां शि शांत्रण कत्रिला छांत्र छवर्शीत शवन्त (क्षनादन-स्मित्र शिष्मत (कान शित्रवर्जन इहेरव ना। हेनि एय श्वर्वत ख्निमोद्रिल (महे शंबूर्वत ख्निमोद्रिलहे थाकिर्वन खरर हेड्रांत छिभाधि, शेम कि मचात्मत्र द्याम त्रिक किछू हे इहेटव ना।

—हेश्लाए धक कर्भ चूडन जारिमार्पत स्थि इहेशार्छ। इंशिक ' क्लिलिश वि' वला। जातिक मगरवं इंश्री

শক্রের বানান করিতে বলেন এবং যিনি তর্ও শুদ্ধ वानान क ति अपदिन जाशा कि शूरकात एन अग रहा। विश्वाद्याप देशलए वक्षण व्यवन इश्या छितियाद्य (य, भानिशारियण्डेत व्यथानर मं जारां पंछ वक् विक रहेश ' (म्लालिश वित्र' मजात्र छेलाञ्च इइता थारकन्। धरे वारमारमंत्र एउँ जात्रवर्ष वामिशां नाशिशार्छ। किছू मिन इहेल गोखाटिक अक जन शामत्री मारहरवत বাটীতে একটা 'স্পেলিং বির' সভার অধিবেশন হয়। মহীস্থরের রাজার চেহারা দেখিয়া সকলে অধিকতর এখ'নে ছिল, মুসলমান ও ইংরেজ উপস্থিত হন। (क्रश्लिष्ट्र हिन्दूत्र। मकन जार्शका (अर्थठा धानर्भन (उजयो। इंश्त व्यक्त ४५ वर्मद्व जिथक नय। करद्रन।

—किनियद्ग এक्षण প্रकाभाक्ति युक्त मङ्जा किति-(उट्टा विदर्भम आक्टर्यात विषय धरे (य. एय देशत अ-দের সহিত তাহারা আজ হউক কাল হউক যুদ্ধে প্রবর্ত্ত इइर्व जाशासित्र निक्रे इइर्ड जाशाता युक्त क्रिवात डिशकद्रन मकल किनिश्च लश्डिছে। ভार्शिति एकश्चर नामक এक थानि इंश्ट्रबजी मश्यां म श्व यदलन (य, जारम-विका उद्दल इहिं किमिय शंवर्गमणे २० लक्ष हि। है। क्य कित्रवात्र जारिन कित्रशंख्न। किन मारिन कार्शत्र এত দ্রির ক সিয়ান धरे दिगि। छिलि खार्थ इहेरवन। भवर्षिए देव कावशानाम अणि मिन विख्व छोडे।

—किनकां जा वां निकां विभिन्न इहे लक्ष है।का भश्शेषी उ इ इ शार्छ।

—পারদোর রাজা ইউরোপের মোহিণী মুর্তি আজিও श्रांख विया ज इइटिज श्रार्त्तन नाई। जिनि जाँदात वक शूव्यक इंडेएवर्ष (अवन कविष्ड्म। इंडाब त्यः क्य २० वरम् । इति मज्त भातिएम छे शश्चि इइट्चन এवर मिथान इइट द्रिइडेड १ शीय जनगेश तांज-धानी দर्শन कतिर्वन। आमिशांत त्रांकांशं यिन इंडे-রোপীয় সমাজের সহিত ক্রেম ঘনিষ্টত। স্থাপন করেন वदर करम शिक्तमांक्षनीय मजाजा अ ज्वानांतनांक स्व स्व मिट्न जानमन कि ब्रिड शादिन छ। इ। इहेल य छ। इ। आ डै। इंटिन द त्रांखात्र कछ डेशकां त कत्रि छ शादन छार् वला यात्र ना

— बचा (मभी त वना विভात्भित कर्म होत्री भन अक क्रभ त्रक लाश इहेग्राह्न। छेश এक जाजीग भाषेन त्रक। छेर। इरेट উত्তम जातिशिन रेजन वाहित इरेग़ार्छ। এই আবিষ্কার দারা গাবর্ণমেণ্টের বিশুর লাভ হওয়ার — দোন ক্যানাল নামক বেহারে যে খাল খনন হই-मख्यवग्।

— लम्रात्रिक ज खर्शक मन्ना नामक ऋर्तन धक हि माई-थिम त्रक जार्ड। जल्कित विश्वाम य, श्रीवितीत श्राम मिम्लानन शाम मिश्रा यथन এक ही मजल जांखा याहेरव। প্রস্তুত করিবার সংকল্প করেন তখন এই রক্ষ্টা সন্মুখে – দক্ষিণ মাজাজে একটি চুক্টের কারখানা হই-इय़ धाइ छित्मरमं जिनि ब्राखाणी वक जारव धाखाड क : त्र । इंश् जिश्मा जित्न छे छ शोइ जिहि मत्म र नाइ, किछ इंशांत्र महिङ य तिथ शिविज जीरवा मश्ख्य ইহার 'এখন যেরাপ তাবস্থা তাহাতে বোধ হয় যে পারে!

जारता मीघ काल इं हा जीविं था किरव।

—আমরা বাজালোর একজামিনার নামক পত্রিকা পাঠে অবগত इहेलांग (य, महीयू दित यूरे व्रांटिज व है कि मर्था ज्यांत्र विश्व शिशांट्य। जिनि मिनांत्र यान था हेट जिल्लन এवर इठार প जिंज इहेरा एक इत्रार्भ वाञ्च इन। এवात (वाञ्चाइत्य शिका व्यव अर्यलामत ञञार्थनार्थ यङ मिनो । दोका ऐशिष्ट्र हिल्लन, उत्पार्था চমৎকৃত হইয়া ছিলেন। ইনি যেরপা বুদ্দিমান তেম্ন

—गार्गता (जला जल ज्रानितिए एए दे दे हे ना मार्ट्य छेईलिम मार्ट्य नामक এक জन छेकौलरक ''क्षांडेन(ड्लं') जर्शा वनगात्यम वनिया शानि (पन। छेकील माहित এই जाश्मान महा कतिशा जामालाज छोइलोत माट्डरवत नाय नालिल करतन। माजिए छेछे छोइलांत्र मार्ट्य क ४० छोका छात्रियांना कतिशार्ट्न धर् इंश्र व्यक्तिक छेकीलाक ममान्यत क्विश्रिश अत्रा थिमान कड़िए जारिमन मिशाए न। एजन जिथाक गरिनें व निश्ठ रे कर्शिनी अवन्यारशम्भारिक महिक मह्याम, ज्रुक द्रार তাহাদের স্বভাব যে কতকটা কলুষিত হইবে তাহা সহজে অনুভব করা যাইতে পারে, এবং যাহাতে তাহাদের এই अভाব वक्तमूल ना इश এর পাশক। মাঝে ২ তাহাদিগকে প্রদান করা কর্ত্বা। বোধ ছয় টাইলার সাছেব আর কখন কোন ভদ্র লোককে অপমান করিবেন না এবং অন্যান্ত জেল অধ্যক্ষণও হয়ত তাহার দৃটাত দেখিয়া অনেকটা खान लाख करित्वन। *

— (य शोता रेमना जिन जन (मनीय रेमनारक कांध-য়াজ করিবার সময় সাহাজাহানপুরে গুলি করিয়া বধ করে তাহার নাম মাত্যাথ। নর হত্যা অপরাধে व्यालाश्वान श्वाहेटकाटि इंश्व विष्यं इंहर्डिश

— ममख शृथिनीत इं जिङ्गा भाष्ठ कतितल जाना यात्र (य, ध्याव९ २४८० জन मम्। छ द्रां जब कदिशार्ष्ट्रनां इंश्रामित्यांत २०० जन मिश्श्रामनहाठ इन, ३०३ जन इज इन, এक শত জন युष्क প্রাণ ত্যাগ করেন, কুড়ি জন আত্ম হত্যা করেন, এগার জন উন্মাদ অবস্থায় মানব लौला मञ्जूरो कर्जन, ७० জन मिश्हामन পরিত্যাপ कदत्रन, ১२० जन वन्मी इत्यन, २७ जन स्वत्यां जना জीवन मान करतन, ७२ জनक दिय था ७ য়ा इয় খুন मानुइन श्रव उ उ छे ज त छे छ दि य श्रवं छ । जा छ । का इ हा, ध्वर ५०% करने व विष्ठां व इहे हा । छ। । न छ

য়াছে উহার জল যাহারা ব্যবহার করে তাহাদের —পাটিয়ালার মহারাজার অন্থি অত্যন্ত জাক জন - উট্যাক্স দিতে হয়।কিন্ত এই ট্যাক্সের দক্ষন লোকের কের সহিত ইরিদ্বরে প্রেরিড হইরাছে। তথার প্রতি অতান্ত উৎপীড়ন হইতেছে। বেহার হেরাল ড शक्षांत्र शिविज जिल्ल छेश निःक्षिथं इहेरि। मृज मश्- रिलिम या, थालित थाति या मकेल जिथितामीशंग वाम রাজা স্বয়ং যে দকল অশ্ব, হস্তি, হাওদা, গাড়ি, স্বর্ণ করে তাহাদের অত্যন্ত ভল কট হওয়ায় তাহারা মণ্ডিত ৰিছানা ইত্যাদি ব্যবহার করিতেন তাহা সমু- গ্রণ্মেণ্ট কর্মচারীদের নিকট জল প্রার্থনা করে। দায় ব্রহ্মণদিগকে বিতরণ করা হইয়াছে। এতদ্বির কিন্ত যখন তাহারা জল প্রাপ্ত হয় তখন তাহাদের দরিদ্র দিগকে বিস্তর অর্থ দান কর। হইয়াছে। জলের প্রায় কোন আবশাক হয় না, কারণ তখন রে দ্রিদ্র निमा (क्व ममूनश एक) इंग्रा शिशा (छ। । । क्वन कर्मा ठाड़ी-शंग প্রজাদের নিকট বিঘা প্রতি ।। । টাকা জলকর मस्य अनि मर्सार्थका श्रीजन इका अना याग्र या, निहिट्ड्म, अना वीना उत्ति या अति का प्रारी যীশু খু ফ্র যে বৎসর জন্ম প্রাহণ করেন এই রক্ষণীও তাহাদের কোন উপকার হয় নাই, স্মতরাং তাহারা জ সেই বৎসর জন্মে, স্মতরাং লোকে ইহাকে বিশেষ ভক্তি কর দিতে বাধ্য নয়। ইহার মীমাংসা এখনো হয় করিয়া থাকে। মৃত্তিকা হইতে এক ফুট উদ্ধে ইহার নাই, কিন্তু বিঘা প্রতি জলকর ২।।০ টাকা ইহা যদি বেড় ২৩ ফিট। ইহা ১২৩ ফিট লম্বা। প্রসিদ্ধ নেপোলি- । সতা হয় তাহা হইলে প্রজারা নিশ্চয়ই উল্ভিন

পতিত হয়, এবং পাছে এই বৃক্ষটার কোন রূপ ক্ষতি তেছে। একটু পরিশ্রম করিলে ভারতবর্ষে উত্তম তাগাক প্রস্তুত করা বাইতে পারে এবং এখানে যদ উত্তম তামাক হয় তাহা হইলে এ দেশের ধন রিনির वकिं ज्रमात्र छेशात्र जाविक् ७ इहेट शाद्र । शतीका আছে এ রূপ বোধ হয় আর কোন রক্ষের নাই। করিয়া দেখা গিয়াছে যে, আমেরিকায় যেরূপ তাম্ক সন্মাৰাসীরা রক্ষণীকে অতিশয় যত্ন করিয়া থাকে এবং হয় এখানেও ঠিক সেই রূপ তামাক প্রস্তুত করা বাইতে

প্রেরিত

इ, जाई, त्त्रल उस्त जगा।

मन्त्रोपक महान्य, शंड ३ना এ প্রেन ভারিখে আমি मिश्रिवादत धनाङ्गवाम इहेट इ्वाइंग जामिट हिलाम, शरिश मरक्षा द्वाजि जान्माज ठिछात ममत, शाहिना स्विग्दन २ जन त्लाक थात्र २४००० १ हिम मह्य है। का लेहेश। आंभर्ता य गां फिट्ड किनाम मिहे गां फिट्ड आंद्रा-इन कित्रिल। পরিশেষে মেয়াজান নামে আর এক वािक वामािन तांत शािष्ठिक ठिष्न। भाषिक नाङ्कित्क मिथिया यांज जायांत ७ जायांत मजी खरात गां छो दिवं विक छे छे थि छि उ इहे हा। छू हे हा एक मिला म कव उ इ हेश्त्रां जि ज्यां विकाम ' छ्जूत जामादम मदन छोका जाट्य जात अहे वाज्जिक का कात्र विनया करे-তেছে অত এব আপনি অনুগ্রাহ করিয়। ইহাকে অন্ত शां ডिতে উঠাইয়া দিলে ভাল হয়'। সাহেব কহিলেন जन मि गाड़िय डेठ जानि (ছाएडगा'। जामना ভয়ে তৎক্ষণাৎ গাড়ি চড়িলাম ও কিয়ৎক্ষণ পরে शां फ़िला किला। शिथ मध्या छे श्रिके छक दमशां जान চুরি করিবার নিমিত্ত নানা বিধ চেন্ট। করিতে লাগিল किछ जायात मनी घटरात मावधारमद निमिछ क्रञकार्य। इइटि পातिल न। इंडि मधा दिन क्वृश्य भी हिल। श्चिनन (मिथिश्र) जामादमत जात्र जाव जाव्लादमत मीमा ब्रिट्न न। शाष्डि थामियागांव एछेनन माछोब्रक श्व श्व मत्नार्यम्न। निर्वमन क्रिनाम। रिकें मासीत किছु (उरे कर्शां कि कि तिलिन ना । इंशां विषय निङाख इङाक इइलाम। , जननखत (देन विक्तितातथत পৌছিলে আমার সঙ্গীদ্বর তাহাদিগোর ভয়ের কারণ धिन्न माछोत्रक जानाइनात जना नाछ इहिलन। इंडि मर्था ठेर ठेर क्रिया घंटो वाजिल। जाम जांच-मिशक निविध करिया कि इलाम 'मावधान अ मजक' भाकित्ल (कान ভয় नाई। (व्रल अर्थ कर्मा हा विद्रा (क्र कार्शन (कान छे शकान करत ने। इरे बात मिथिया कि প্রতীতি হইল না। 'তাহারা আমার কথা না শুনিয় :৮ বৎসরে বয়ঃপ্রাপ্ত হইয়া কোন ভূমাধিকারী হিসাব দেখিতে পান না। তাঁহারা সদর খাজনার क्षिमान माग्छे १ दिक धार्च कथा वलाग जिन जिल्ला । (मয়।জানকে দেই গাড়ি হইতে নামাইয়া দিলেন। (कवल इंश् विलिश) हे काल इंशलन ना। (मंशांकानरक क्लिजमाति तमार्थकं कतित्वन। जामि इशत वह সৌজন্যতা দেখিয়া পরিচয় জিজাসা করায় অবগত কিন্তু তদ্রপ দৃষ্টান্ত আমরা আদে দিখিতে পাই নাই। इहेलांग, इनि विकिशांत्रशूर्वत व्यागिष्ठी छिलेन शवर्गिष यिन मगरश्च वाच विस्तृ विद्यान करत व्यागवां माछोत्र, नाम गातू गितिजा ভূষণ ভট্টাচাर्या। २१ व - जिट्यान जातिय वार्षत राष्ट्र भाषित देखित निकि ध्यान क्वांत्नित्र (माकक्त्रा इग् अ जाहात किन প्रतिभारमत मिहिত २ वर्मत (भग्नाम ७ ०० (वर्णत छ्कूम इहेग्राइ)।

व्यवस्थि वक्तवा धरे (य, व्यागीत्मव (म्लाव ञादनक उप मछ। निर्माक (वल योक्सि भेषनाभेषन कतिएक इस उ एक्टिन श्रीमश् विश्रामत मञ्जाबना। जाक-धव जाभाम कालं जाङ्कित यन गाउन थारक य विक-वातश्रत शितिजा वात्त निक्रे सीत इःथ जानाइरल यरथाहिङ প্রতিফল इইবে।

जनीय धकां ख वना मान। মদাপুর) ভালীয় একান্ত বস্ ৬ই (ম ১৮৭৬) ভীভবচরণ দত্ত

V जारगोत्रा जुगाधिकांत्री मद्यास जाहेन।

অযোগা ভূমাধিকারি সম্বন্ধে গাবর্ণমেণ্ট যে সকল वाहित धाञ्चा कित्राहिन, जान माधार्व धाराव छ९ अिं अक्रांभा मं वाक कर्त्र नाहे, क्रिवात आवानाक किम ना। कार्रा, नावानकिमित्रांत श्रक्त मझ महिरावन-्र (मिए देत छ तम्भा ছिल। ३१३७ थः व्यक्ति १० वार्च-(नत्र) भारतां श প্রকাশ (य, নাবালকগণ স্বার্থপর কার্য্য-কারকগণের ভত্বধানে থাকিয়া কেবল মুখ ও অসচচরিত্র इश, अ रमरे मकल लघूराज्ञ। कार्याकातकशन नावालरकत मिल्ले जिस कर्ता यादार नानानकान य य शन

ও অবস্থানুরপ শিক্ষা প্রাপ্ত হইয়া ভবিষাতে স্বীয় কার্যা निकां कतिएक मक्त इय ज्ञाना, अ जारानिरात मम्भाजि बक्काब निमिज महादान शवर्गमणे जाङाफिरशंब विमा। শिका ও সম্পতি চালানর ভার আপন ক্সন্ধে लइशिष्टिलन। इङ्कार्ड शवर्गिय देव क्यान स्वार्थ थाकूक वा ना शाक्क, नावानकशालंब প্রভুত মঙ্গল সাधिত रहेशार्छ। किछ धक्कन ज्ञाश वावरात ज्याधिकाति भारति व्यक्ति भारति यामून जाहतन कति किति कि তাহাতে সকলে এই আতঙ্ক উপস্থিত হইয়াছে।

প্রথমতঃ, ১৭৯০। ১০ আইলে ১৫ বৎদর বয়ঃক্রম नावालकीत्र भीम। विलय्ना धार्या हिलः, अही मन्भार्व हिन्दू वदः व्यानक छिल कूबी छ नोडि व्याम करत्। श्वर्व-थर्मानूयात्री। किन्छ र्थ ১१৯० जारक रे शवर्गमणे २७ जारेन দারা নাবালকী ১৮ বৎসর বয়ঃকুম পর্যান্ত বিন্তৃত শাসন দারা বিপর্যান্ত ভিয় কখনও ক্ষমত। প্রাপ্ত হয় না। করেন। যদিও আবহমান কাল হইতে ১৫। ১৬ বৎসর নাবালকগণ কঠোর শাসনের বিষময় ফল ভোগ वय्राम । (मर्ल প্রাপ্ত ব্যবহার হত্যা রীতি; কিন্ত তাদৃশ তাণ্ণা বয়দে বহুলে ভূমি সম্পতির ভার হত্তে না मिश्रा, व्योष्ठांत दरमद्र वश्रम मारालक इउग्नंत निश्म করা অসমত হইয়াছিল না। এই প্রীম্ম প্রধান দেশে তাহারা ২১ বৎসর পরে হত বুদ্ধি, ভ্রোৎসাহ ও ইন্তিয় व्यक्तित वर्मत वश्रम ममख मानमिक इं छ ममाक विक-मिड इश, এवर उৎकाल পर्यास यञ्च शूक्य क लिका पिटल, कार्याशियाशी (कन, উত्তम निकाई आछ इउरा यारा। किन्छ ৮२ वरमदात जूरमामर्भागत शत शवर्गमणे कि जन्म এই जाया विधि পরিবর্ত্তন করিয়। ২১ বৎসরের वाहेन প্রচার করিলেন, আমরা বুঝিতে পারি না। मगाज विश्व दवन जानका ना शाकित्न विजाजी म भवर्न-(मणे मांभाषिक विष्य इस किथ कि विषय भा। এই মত অবলম্বন করিয়া ১৭৯৩ সালের ১০ আইন माग्र जाश श्वित्र जत थारकः, किन्छ शवर्गा वक्ष पृष्यून इइयाट्टन विलया इडेक जात य कात्र श इडेक, प्रभीय गमारजात छे भत विव पृथि निः एक भ कि दि छ इन।

यादा इडेक, व्यामना विलिट डिझाम (य, ममाज रिकटलात्र मञ्चारन। थाकिटल श्वर्गिप भाषाक्रक विष्या इंख्याक्ष क्रिएं मक्रम, नजुव। न।। यान खीश मुम्ल जिनसे कितिज, जाथवा ঋণে জড़ी जुंड इरेड, আর গাবর্ণমেণ্ট যদি জানিতে পারিতেন যে, অপক্ক वृक्ति निवक्तन जाहानित्यात जान्न प्रवच्छ। घडितार्ड, जाका क्रहेल श्वर्णियण्डेत धरे कार्या (नाय निकाम ना, नार्षात्र । भी ड श्रधान इंश्लर्खत युवकरान यान ३१ व्यथन। इइवात छिभ्याभी विमाध्याम क्रिया २० वर्मत बग्राम প্রজাপালন ভার গ্রহণে পার্যা হয়েন, তবে গ্রীম্ব श्रधान ভারতবাদীরা কি ১৮ বংসর বয়গে জু म একটি জियनाती চালाইতেও অকম?

ञू जन প্রাপ্তব্যবহার বের আইনের একটা ভাবী कल निकास ज्यानक। अनिकी सभी भन भाष 85 । 82 वर्मात्रत अधिक काल क्रीवन धात्रन कर्त्रन ना। यु उत्रार वि चारेन धावल थाकिल नावानकी जवमान इहेरव न।। প্রত্যেক ভূমি সম্পত্তি পাকতঃ পুনঃ পুনঃ গার্ণ-(गएछेत इए अ अिएर्व। अधी अभिनात्र गालंब ज खक अवन्। जामानिद्यांत (वाध इय्र, श्वन्यानित त्राना চিরস্থায়ী বন্দোবন্তী মহাল দেখিয়া লালা সম্বরণ করিতে जक्म। यनि जाश इत, म्लाहिकाल किमिनाती थाम कित्रिश लि हेल (कोन कथ) थारक ना। ज्ञारम काञ क्रिशो स्वन প্রয়োগ করার আবশাক কি? আর, वामानियात वाम्द्राध वहे (य, श्वर्षिण विज्ञान वाद्यत मश्तां जातक धकि एउ प्रोहिशि शे एनन।

श्वर्णिए देव जिन्ति था। नावानकश्री के जवस्त्रिक अकार्याभिर्याभी निका श्रान करतन। किन्छ अनत-धानका थायुक का श्राद किंदू है इस ना। नावानकारी ना इश्तां जिना बोजना बिशिः ज भारत। श्रान्दिगः छेत

व्यथीरन थाकिया कोन नावालक अयाव मामाना अने पनम পরীক্ষার জনোও প্রস্তুত হইতে পারে নাই। এটি गवर्गातिव निङ्गेख क्य क्षांचात्र विषय नाइ। वख्रुः यে প্রণালীতে শিক্ষা প্রদান করা হয়, তাহাতে, নিতান্ত मद्रश्वीद नद शूल ना इइल, मामन मानद कथन अ क्रजिविमा इहेटज शांद्र मा। नावानकशांविक माज् ভाষা ও জगीमादी कार्या भिक्न मियाद জना कान শिक्क नियुक्त नाई, किन्छ त्रिशार्ड (शना, छिन कर्रा इंगािमित জाला जात्मक मिक्क जार्छ। नीजि भिक्षा कोशिक वल जोश नावालकशन याश्र जात्न नाः (यण्डे याक्षेचे विद्यव्या कक्य, यान्य श्राह्म करित्र करित्रिट्ट ; २) वरमत वशःकम श्रांष जायाप शांकिए इनेल जारता (जांग कतिरा। नेनाए नाज कि? लांडिं मध्या जाममा अहे पिथिंड शाहे या, शतांत्रन इहेता शिष्ट्र ।

धक्न नार्नानकश्रापत नात्र मात्र मात्र किছू विनिय। अशिष्ठं म इनिश्चितिष्ठे मत्म कि निश्चाम প্র:ত্যক নাবালকের वाद्यंत हिमाव इয়, তাহা কেছই জানিতে পায় না। या शत लक्ष छ। का जात जात जात वा शत वहन कि ति इয়, ৫০ হাজার টাকা আয়শালী নাবালককে কোন कान म् खोल्ड जम्जितिङ छ मिट्ड इया शक्ता खत्त, नाराक्षक राम्क जाकाश द्वाभा इश, जाकाट वार्षात्र পরিমাণ নিতান্ত অসামঞ্জনা বলিয়া বোধ হয়। এক জন চাকর ও এক জন পাচক ভিন্ন কোন নাবাল-क्ति मध्य पिछीत्र भनूषा थाक ना। इस्ता वाहि इइटि आंगिबां न मया घोषा छ ता भारतामा ज मायी न नाग्रं वाजीय अकारनत निक्रे विनाय नहेया याय। जाहा-তেও ইহাদিগের অর্থ সাজ্য নাই। আশ্চার্যোর বিষয় **७३ (य, किमिननांत्र, काल्लिक हैत व्यथन। मार्ग्स्ट कार्य,** नाबलकिं मिर्शित ज्वन (পायन जिल्ला मस्कीय वारत्रत नार्त ''किं खिवकिंखि जलव खूब्रांज'' वार्त्तव छे।का वार्रिक वागानेव कदिया (पन। वागमना कि छान। कति, नावा-लकशालित दार्शत हिमान मार्थिनकांत्रशन किकना (पिथिट श्राम ना ?

ক্যান্থেল সাহেবের নিয়ম আবেগ চমৎকার। তিনি व्यादेन कि दिशा शिशा (इन (य) नावाल कि निशः क नशं छ छै। का (मण्या इहेर्य ना, जाशह माधार्यमाद्र जाहा मिर्श्व ভূমি সম্পতিও র্দ্ধিকর। হইবে ন।। কেবল রাস্তা, थाल उ श्रुक्तिगीत माधा এই হত ভাগাদিগের অর্থ निःशिक्थ इदेरि। कार्याया मार्द्य वर्णन एय, नावलकर्शन वश्रधीखं इरेश जिथिक छै।को इर्ख भारेल प्रबुख इहेग পড़िर्द ; उड़्जना (य क्लान शिक्क जाहा मिर्शित छोका राग्न कर्ना कर्जगा। जाभना जिल्लामा कति, यांश्रंत्र होका (म यमि जल्ल (किल्या) (म्य, जांश्रंड অপরের কি? তার অধিক টাকা হত্তে পাইলেই যে लाक इत्रु इश, कादियन मर्शमश ध मिकाखि (काथाय थाइटलन? जेम्म धन विद्धान विद পणिउटक इश्ल एख अ अन यि छ। शत कर्छ। कतिय। (म छय़। कर्छवा। वाभद्रां खद्रमा कदि वर्खमान लिए एए एए भारति भारता-भग्न धरे जकल ज्ञाशि निग्रम जित्राहिक कविशा जालिक नावालकश्वाक जानम विभिन्न इहेट छन्ना व कबिदवन।

तांश्यांच मर्का खि (मला।

画本1:-

मन्त्रभाषक मङ्ग्रा । अहे स्मान शुर्व वरमद्वत विरत्न व्याशनादक कानाइग्राहिनाम। ध्वादव्र पना ७०(ल रेठल इहेट ७३ रिक्माथ शर्याल खिल छिल। इहात व्यानम जनक विदर्भ वार्थनाति मश्यक्षा कानाइ जिहि; जनुश्र श्वांक हेरा शक्य किहित्स राधिक रहेरा।

(मलाव मांज मिन शर्यान्य माधारणंडः (य मक्द

জিনিষ পত্রের খরিদ বিক্রয় এবং যে সমুদয় আমেদদ জনক ব্যাপারের অনুষ্ঠান হইয়াছিল প্রথমতঃ তাহার উল্লেখ করিয়া তংপরে অন্যান্য বিষয় লিখিতেছি।

মেলায় নানা স্থান হইতে নানাবিধ দোকান আসিরাছিল এবং জিনিষ পত্রও বিস্তর বিক্রেয় হইয়াছিল। কিন্তু
মেলার প্রথম তিন দিবস রুফি হওয়াতে সকল দোকানে
আশাসুরূপ বিক্রয় হয় নাই। দোকানদারগণের নিকট
হইতে কোন রূপ কর বা তোলা লগুরা হয় নাই,
বরং তাহাদিগকে ছাপরা বান্ধিয়া দেগুরা হইয়াছিল।
আমোদজনক ব্যাপারের মধ্যে যাত্রা, রামায়ণ, কবি,
গাজির গীত, জারি বা বয়াত, বিলাতী ছায়া বাজী
বা ফ্যান্টাস্ মেগোরিয়া, নাগারচীর বাজনা, ইংরাজি
বাজনা (দেশীয় দল ক্রত), ছবির নাচ, এবং মাণার সং
ও বস্তরূপীর সং হইয়াছিল।

ইহা ভিন্ন যে সকল উপকারজনক বিষয় দেখিলাম ও শুনিলাম নিম্নে তাহা বিরত হইতেছে।

১। লাঠি, তরবারি ও মাটীয়াম খেলা এবং ফুলের ছাত্রদিগোর বাায়াম। ২। ঘোড় দেড়ি। ৩। শিল্পা ও ক্ষজাত দ্রব্য প্রদর্শন। ৪। বস্ত্র বয়ন যন্ত্র বা কাপড় বোনা কল। ৫। ইলেক্ ট্রিক্ টেলিপ্রাফ বা তাড়িত-বার্ত্ত-বহ যন্ত্র। ৬। বক্তৃতা ও জাতীয় সঙ্গীত। ৭। পারিতোষিক বিতরণ। ৮। শান্তিরকা।

১ম। লাঠী, তরবারি ও মাটীয়াম খেলা এবং স্কুলের বালকদিগোর ব্যায়াম।

লাঠি, তরবারি ও মাতীয়াম থেলা এবং স্কুলের বালকদিণের ব্যায়াম। লাঠি, তরবারিও মাতীয়াম খেলায় হিন্দু
মুসলমান বিস্তর লোক উপস্থিত হইয়াছিল। মেলার মে
ও ৬ঠ দিবদে খেলার স্থলে নড়াইলের ডেঃ মেঃ প্রীযুক্ত
বারু উমাচরণ বালোপাধ্যায়, মুনসেফ প্রীযুক্ত বারু তারা
প্রেসন বন্দ্যোপাধ্যায়, দিতীয় মুনসেফ প্রীযুক্ত বারু অরদা
তরণ ঘোষ এবং সব ডেপুটা মাজিপ্রেট প্রীযুক্ত বারু অরদা
প্রসাদ দেন মহোদয়গণ ভূপস্থিত ছিলেন। যত লোকে
খেলিয়াছিল গুডাহাদের মধ্যে ১২ জন বিশেষ নিপ্রতা
প্রদর্শন করায় তাহাদিগকে মেলার ৬ঠ দিবসে পারিভোষিক দেওয়া হইয়াছিল। ব্যায়ামের জন্য যে কয়েকটা
ছাত্র উপস্থিত ভূহইয়াছিল তাহার মধ্যে ত্রইটা বালক
পর্যায়াম করিয়াছিল যে দর্শক মঞ্জী তাহা দেখিয়া
ভাত্র আফ্লাদিত হইয়াছিলেন। তাহাদিগকেও পারিতোষিক দেওয়া হয়া

२ (घां ए प्री ए।

মেলার কয়েক দিন প্রত্যহ প্রাতঃকালে ঘোড় দিছি হইয়াছিল। সকল ঘোড়াই এ দেশজাত, ভাহাদের মধ্যে একটাও অত্য রূপ নহে। ঘোড়াওয়ালারা প্রায়ই অশিক্ষিত লোক স্মৃতরাং ভাহাদের মধ্যে নিয়ম রক্ষা করা ভারি কঠিন হইয়াছিল। সাত দিনে প্রায় ৫০।৬০ টী ঘোড়ার দেড়ি হয়, অনেক সময়ে দালা হওয়ার উপক্রম হইয়াছিল কিন্তু অধ্যক্ষগণের যত্ন ও সাবধানভায় ভাহা হইতে পারে নাই। বোধ হয় ভবিষ্যতে এরূপ ঘোড় দেড়ি যথানিয়মে হইলে ইহা হইতে অনেক স্ফল উৎপত্ন হইবে।

ও শিশ্পা ও ক্ষিজাত দ্ব্য প্রদর্শন।

জীলোকদিগের তৈয়ারি অনেক কারপেট ও স্থতার
কর্ম এবং কর্মকারদিগের লেছি নির্মিত কয়েক খানা
ছোরা, ছুরি ও জাতি এবং একটা রূপার গাছ প্রদশিতি হইয়াছিল। সমুদায়কেই নৈপুণ্যের তারতমা
অমুসারে পারিতোষিক দেওয়া হইয়াছিল। শিপ্প
দ্রব্য গুলির মধ্যে এমন হুই তিন খানি ঢাকাই অমুরূপ
সাড়ি প্রদর্শিত হইয়াছিল যে প্রক্রত ঢাকাই তাহাদের
নিকটে রাখিলে কোন্ খানি ঢাকাই ও কোন খানি
দকল তাহা বাছিয়া বাছির করা স্কেঠিন। যাহা হউক
এরপ শিপ্পের উপকারিতা অতি অপ্প। কবে ভাল
ভাল লোহ সামগ্রী কারপেটাদির স্থায় অধিক পরিমাণে প্রদর্শিত হইবে?

8 काशेष (वाना कल। बाबधाय निवामी खोबुक, वाब मीड,नाथ (याघ

त्र निशिष्ट शाल প্रস্তাবদী অভান্ত বিস্তীণ হইয়া পড়ে। অথচ ভাছাতেও হয়ত কেহ বুঝতে পারিবেন না। তাহার স্থল বিবরণ এই যে, তাহা দারা প্রত্যেক मिनिए ए जम् लि श्रात्रमार्ग कार्शक (वांना इत्र। वरे हिमार्व धरितल वक जन लारक था ७३काल रहेर ७ সন্ধ্যা পর্যান্ত কর্মা করিয়া অনুন ৪৬ হাত কাপড় প্রত্যহ প্রস্তুত করিতে পারে। বাস্তবিক ইছা দারা সীতানাথ वावूत वृक्ति ७ ज्यावमारात्र वित्याय श्रीत्र शा शा शियादछ। এই कल जी य वन्न दिन देन जिन्न जिन्न जिन्न जिन्न मािপान इरेशा माँ ए। रेल जारा वृद्धिमान वािक मात्वरे সহজে অনুভা করিতে পারেন। বিশেষ প্রশংসার विषय अहे य हेश कि न विला जी का शर्फत कर नत जानू-कत्रत्व ध्रञ्ज इंग्र नाइ। छनिनाम मीजानाथ वातृ वर कलगी (१८०० लर्ड श्रञ्ज रहेग्राह्म। वर् কলটী প্রদর্শন করার জন্য তিনি কোন পুরফ্রার প্রহণ क्द्रबन नाई।

ए इत्लक् हिक् दिलिशोक।

थहें विष् वाश्वर्ध जनक इहेश हिल। जाद्र किक्र भ मञ्चाम (मञ्जा अर्था अर्थ या चेट्ड श्राद्य जाहा जिल्ला त ভদাভদ লোকদিগকে বিশেষ করিয়া বুঝাইবার জন্য मीजानाथ वाबु धे र दिलिशोक श्रेष्ठ कर्त्रन। जानमाज २०० শত रख गावधारन তারের তুইটা ফৌশন ঘর প্রস্তুত इয়। पिलां अ करंशक मिनइ र्ध छ्हे रिकेशन इहेट जार्त मशाम मकल यां जांशां ज कित्रां हिल। विश्लिष श्रानंत তড়িৎযন্ত্র, সমাদ আদান প্রদানের যন্ত্র এবং তার रेज्या मि ममूना वर्षे जिनि निष्ठ পরিশ্রম করিয়া গ্রামা জিনিষ ও প্রাম্য কারিকর দারা তৈয়ার করাইয়াছেন। ইহাতে সহরের কোন জিনিষ বা কারিকরের সাহায্য अश्व करत्रन नारे। खनिनाम छिनिआक वाक्रिजीत्र मर्था ত্বই একটী বুতন কোশলও করা হইয়াছে তাহা লিখিতে शिल পত थानि वड़ इहेग्रा পড়ে। এই তারে তুতন मश्किष प्रांता वाष्ट्रांना अ मश्कृष ভाষায় मन्नाम (मअग्रा उ ल उरा। इ इरा हिल। पर्णक म जली इर (पिश्रा यात भात नाई मन्छ इहेशा शिशाहिन এवर मीजानाथ वायूक थना वान ना निया थाकिए शादिन नाई। ज्याञ वारगाम वारशका धहे क्रश देवकानिक वारगमहे य ब्धिष्ठ जाशा त्याथ इश ध श्राप्त व्यक्तियान वाकि यादिहे कशिक्ष द्विया भार्तिया हिन। य कर्यक नि ज प्राक्ती छेक इहे छिलि श्रीक छिल्। निश्रीक श्रीक श्रीक मक्त व्यामान व्यमान कित्रिया ছिल्लन डाँशि मिश्य यञ्ज, शित्रव्यम, উৎসাহ ও নিয়মানুরাগ দেখিয়া আমরা বিশেষ সন্তম্ভ इहेश्राहि। धारे कर्ण (भिलात शत) मीजानाथ वात्र व्यागञ्च खीलांक, वालक अ इक्रिनिशंदक जादबब थर्वदबब त्रक्मा त्याहिया निवांत ज्ञा इहेंने श्राहरूत वानीट इहेंने थिनान कत्राहेश्रा कार्या ठालाहेट उट्टन।

७ वङ्खा ७ जा जो स मजी ज।

भिनात्र करत्रक मिर्नि छा छ। इ रेवकारल धक धक छ। সভা হয় এবং তাহাতে ভদ্ৰাভদ্ৰ বহু লোকের সমাগ্ৰম इहेश ছिल। वक्जाशन कथा अ मधा मधा मधा मधी स श्रीय निर्मिष्ठ विषएय बङ् छ। क्रियाहिलन। न ए। इतन भिनवी आवड्न थाटनक् वि, ध, शक्षारश्र मञ्चान ইলের ডেঃ ইন্সপেক্টর জীয়ুক্ত বাবু শাগ্মলাল দত্ত वि, এ, मामक खबा मिवत्नत्र व्यदिवधका मञ्जाक्ता, मजाहेदनत षिठी स मूरक्षक बीमू ज वावू इर्गाठ तथ (यास महाभा स उ उवड़ा वाषान। ऋत्नित्र व्यथान शिष्ड बीबुक वार् व्यमजनाथं च्छाठाया मश्राणा यमाज दिल्ला मयद्य, व्यवश् बीयुक्त यां यू भीकां यां यां या महान्य की विका मश्वक वक् जा कविशाहित्नन। वक् जा श्रीन माधा-वक् তাবসালের পর, 'মিলে সবে ভারত সন্তান,' 'দিনের দিন সবে দীন' ইত্যাদি কতিপয় জাতীয় সঙ্গীত विभिष विभाष वाङ्क कर्छ्क यूङात्न शाशिङ इइङ।

৭ পারিভোষিক বিভরণ।

(मल्गांत यर्छ मिनतम প्रांति (ज्यां विकत्तांत मजां इया (ছाট वड़ 80 है। (त्रीशा स्पड़ालित महिड 80 थानि मार्छिकि विভिन्नि इश। इंश्रा मर्था लाछि उ তরবারি খেলায় ১২ জন, মাটীয়াম খেলায় ৩ জন, স্ক্লের वानटकत वाग्यात्म २ जन, त्यां ज त्नि ए जन जन भिष्ण उ क्रिकां ज जिया थानर्भात ३५ जन (मां हे 80 जा.न পারিতে বিক পাইয়াছিলেন। সেই সময় অহান্ত অনেক ভদ্রলোক ব্যতীত নড়াইল মহকুমার পূর্বেশ্বজ विচারপতিগণ উপস্থিত ছিলেন। সীতানাথ বাবু গত वरमदात পুরস্কার বিভরণের বিষয়ও এবারের পুরস্কার विजत्रां विषय छिन छेनल एक धक छै। করেন, তদ্ধরা, বোধ হয়, ভজাভদ্র অনেকেরই অনেক विषा्य श्रीिक उ रिज्ञा উपिक इहेश ছिल। यक ्ष-वमार्नित श्रंत नज़ाईरलत (७: भः बीयुक वातृ छेमां इत्रा গজোপাধার মহাশ্র স্বহন্তে মেড্যাল ও সাইফিকিট छिलि विजत्र । करत्र न।

পারিতোষিক বিতরণ জন্ম খুলনিয়ার নিক্টস্থানিবাদী প্রীযুক্ত বার পরেশনাথ সিংহ মহাশার বেলপুলা নিবাদী প্রীযুক্ত বার ভুবনমোহন বন্দ্যোপাধ্যায় মহাশার ২ টাকা, নড়াইলের প্রীযুক্ত বার ক্ষলাল দত্ত উকিল মহাশার ২ টাকা, নড়াইলের স্মাল কজ কোর্টের আমিন প্রীযুক্ত বার ছর্গানারায়ণ চেপ্রিরী মহাশার ১ টাকা, ফেদী নিবাদী প্রীযুক্ত ছাবের সেখা ৭ টাকা এবং নওরা প্রাম নিবাদী প্রীযুক্ত ছোসেন আলিমির ২ টাকা দান করিয়াছিলেন। এই রূপ অ্যাচিত দান গুলির নিমিত্ত দাত্রণ মেলার অধ্যক্ষ ও অন্যান্য ব্যক্তির যথেষ্ট ক্রডজ্ঞতাভাজন হইয়াছেন।

৮ শান্তি রকা।

শান্তিরক্ষা সম্বন্ধে সংক্ষেপে ইহাই বলিলে পর্যাপ্ত
হইবে যে মেলার ৭ দিনের মধ্যে একটা জুতাওয়গলার
কিছু টাকা চুরি ভিন্ন কি বাজার কি প্রাম কুত্রাপি একটা
চুরি বা একটা দাঙ্গা হয় নাই। অধ্যক্ষগণের যত্ন ও
সাবধানতা এ সম্বন্ধে বিশেষ ধন্যবাদ যোগ্য। যে
সকল গৃহস্থ জ্রীলোক মেলা দর্শন করিতে আদিয়াছিল, তাহারা তাঁহাদিগোর বিশেষ তদ্বিরে বাজারের
অনতিদূরে অবস্থান করিবার জন্য একটা বিশেষ স্থান
প্রাপ্ত হইয়াছিল। তাহাদের উপর কোন বদমায়েস
লোক কোন প্রকার অত্যাচার করিতে পারে নাই।
তাহারা প্রহুরী দ্বারা রক্ষিত হইয়াছিল।

সম্পাদক মহাশয়! এ উপলক্ষে আর হুই একটা
কথানা লিখিয়া থাকিতে পারিলাম না। এই মেলায়
যেরপা সমুদায় সদমুষ্ঠান হইয়াছিল, সেই রপা ইহাতে
আবার কোন অসদমুষ্ঠান না ইইতে পারে তক্জন্য অধ্যক্ষাণ বিশেষ যত্ন করিয়াছিলেন। ভাহারা এই মেলায়
বেশ্যাদিগকে ও আবকারির দোকানদারদিগকে আসিয়া
ব্যবসায় করিতে দেন নাই। এবং শুনিলাম যাহাতে এইউভয় বিধ পাপ মেলায় প্রবেশ না করিতে পারে তাহার
বিশেষ যত্ন করাই ভাঁছাদের সংকপা।

চৈত্র ও বৈশাখ মাসে ঝড়, র্ফি, রেজি ও পীড়া প্রভৃতি অনেক উৎপাত উপস্থিত হইয়া লোকের অনিষ্ট করিতে পারে, ইহা ভাবিয়া এবং এবারে তাহা কথঞ্জিৎ দেখিতে পাইয়া মেলার অধ্যক্ষগণ বিশেষ রূপে ঘোষণা করিয়া দিয়াছেন যে, এই মেলা আগগদীতে ফালগুণ মাসে হইবে।

উপসংহার কালে প্রার্থনা এই যে এই মেলার অধ্যক্ষগণের সদিচ্ছা সকল পূর্ণ ইউক এবং মুশোহর জেলার অন্তর্গ ত অস্থান্ত মেলার অধ্যক্ষগণ ই হাদিগকে অমুকরণ করিয়া ভাঁহাদের মেলা গুলির কুৎসিদাবস্থার পরিবর্ত্তন করুন।

到 :—

জ্জেএই পত্রিকা কলিকাতা, বাগবাজার আনন্দ চন্দ্র চাটুর্য্যের গলি ২ নং বাটী হইতে প্রতি ব্রহম্পতিবার জীচন্দ্র নাথ রায় দ্বারা প্রকাশিত হয়।